||२१७||

|| रामकथा ||

मोरारिबापू

मानस-हनुमानचालीसा

गैंगटोक (सिक्किम)

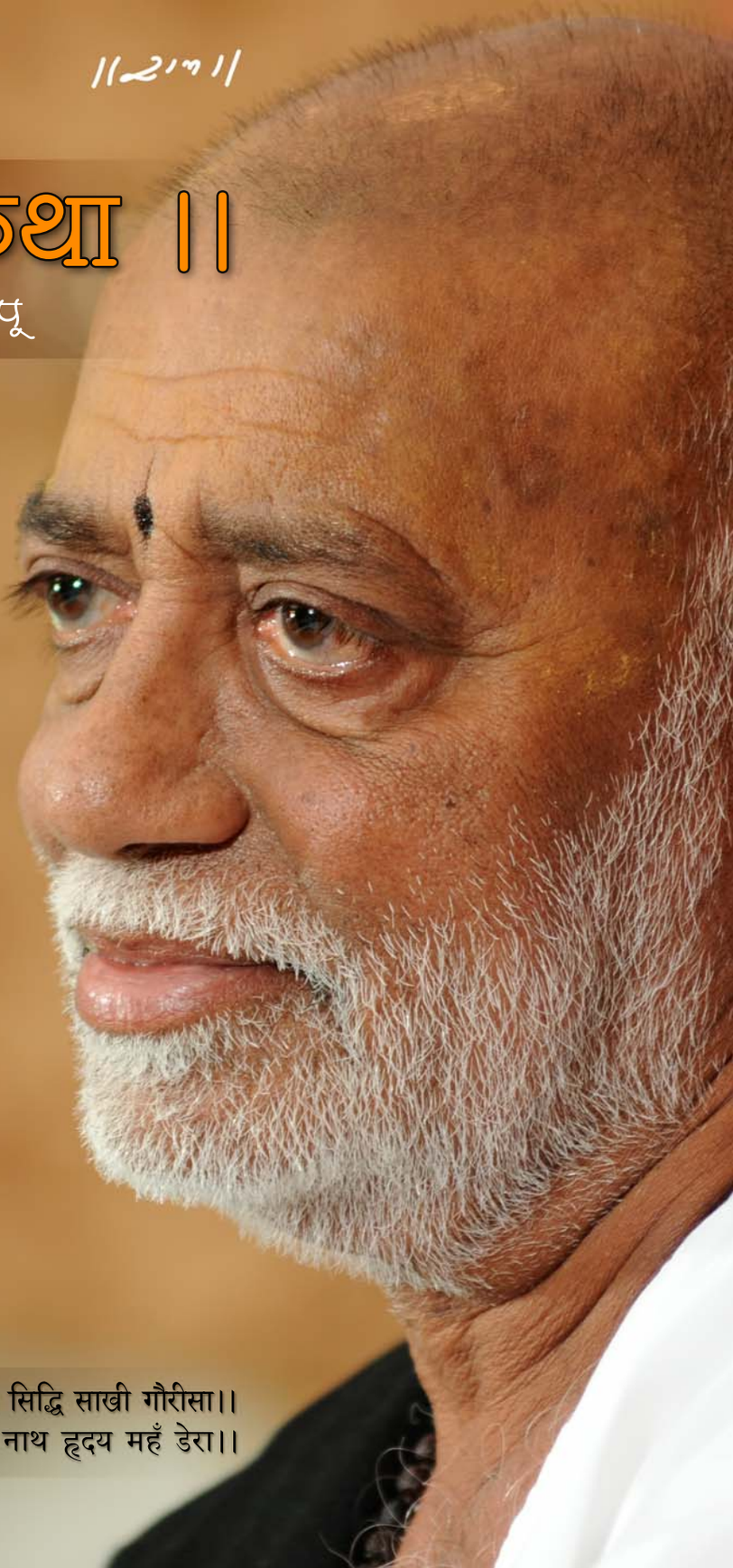

|| जय सीयाराम ||

जो यह पढै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।।

|| रामकथा ||
मानस-हनुमानचालीसा : ८

मोरारिबापू

गंगटोक - सिक्किम

दिनांक : १४-०९-२०१३ से २२-०९-२०१३
कथा-क्रमांक : ७४९

प्रकाशन :

फरवरी, २०१४

प्रकाशक

श्री चित्रकूट धाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)

www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट

© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक

नीतिन वडगामा

nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :

ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स

स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

सिक्किम की राजधानी गेंगटोक की भूमि में ता. १४-९-२०१३ से २२-९-२०१३ के नौ दिनों मोरारिबापू ने रामकथा का गान किया। यह रामकथा 'हनुमानचालीसा' भाग-आठ के रूप में केन्द्रित हुई। बापू ने सबसे पहले लंडनमें 'हनुमानचालीसा' के विषय में गायन किया था और उसके बाद क्रमशः अयोध्या, वाराणसी, माउन्ट आबू, घाटकोपर (मुम्बई), कैलास मानसरोवर और अमरिका में 'हनुमानचालीसा' की पश्चाद्भूमें रामकथा कहनेबापू की व्यासपीठ मुखरित हुई थी।

'मानस-हनुमानचालीसा-७' की स्मृति करते हुए बापू ने धर्मसंकट, अर्थसंकट, धैर्यसंकट, कालसंकट, देशसंकट, प्राणसंकट इत्यादि संकटोंका भी स्मरण किया और वहां से अपना दर्शन आगे बढ़ाया। हमारे जीवन में आते रहते चार अंतःकरण के संकट को मोरारिबापू ने रेखांकित किया और उससे मुक्त होने का उपाय भी दर्शाया, ''एक, मन का संकट, मानसिक संकट है। दूसरा, इन्सान की बुद्धि भी एक संकट बनकर बैठी है आज के युग में। तीसरा, आदमी की रुचि ने संकट पैदा किया है। हमारे चैतसिक संकट निरंतर बढ़ रहे हैं। और अंतःकरण का चौथा अहंकार तो ओलरेडी संकट है। मेरे अनुभव में ये ऊतर रहा है कि हनुमंत आश्रय मानसिक संकट, बौद्धिक संकट, चैतसिक संकट और अहंकार के संकट से हमें मुक्त कराता है।''

'हनुमानचालीसा' का आदि चालीसा के रूप में माहात्म्य करते हुए मोरारिबापू ने स्पष्ट कहा कि, '' 'हनुमानचालीसा' का सर्जन हुआ इससे पहले किसी देवता के चालीसा का सर्जन भारत में नहीं हुआ था। साड़े चार सौ वरस पहले कोई चालीसा का निर्माण हुआ हो, तो मेरी जानकारी में नहीं है। 'हनुमानचालीसा' आदि है। ये पक्का है। ये त्रिसत्य है।''

मोरारिबापू ने हनुमान का विशिष्ट ढंग से परिचय दिया एवम् 'हनुमान' शब्द का इस तरह अक्षरार्थ भी किया, '' 'हनुमान' में पहले अक्षर 'ह' का अर्थ हकारात्मक सोच। दूसरा अक्षर 'नु' हमें ये सिखाता है कि जो वस्तु नुक्सानकर्ता हो उसमें हा मत कहना। तीसरा अक्षर 'मा' का अर्थ है सबको मान दो। और 'न' मानी नम्रता। हम और आप ये चार सूत्र समझने की यदि अपने जीवन में कोशिश करे, प्रामाणिक प्रयास करे तो हनुमंततत्त्व समझ में आ सकता है।''

'मानस-हनुमानचालीसा' रामकथा के माध्यम से मोरारिबापू की व्यासपीठ ने यों हनुमंततत्त्व के संदर्भ में तात्त्विक दर्शन व्यक्त किया।

-नीतिन वडगामा

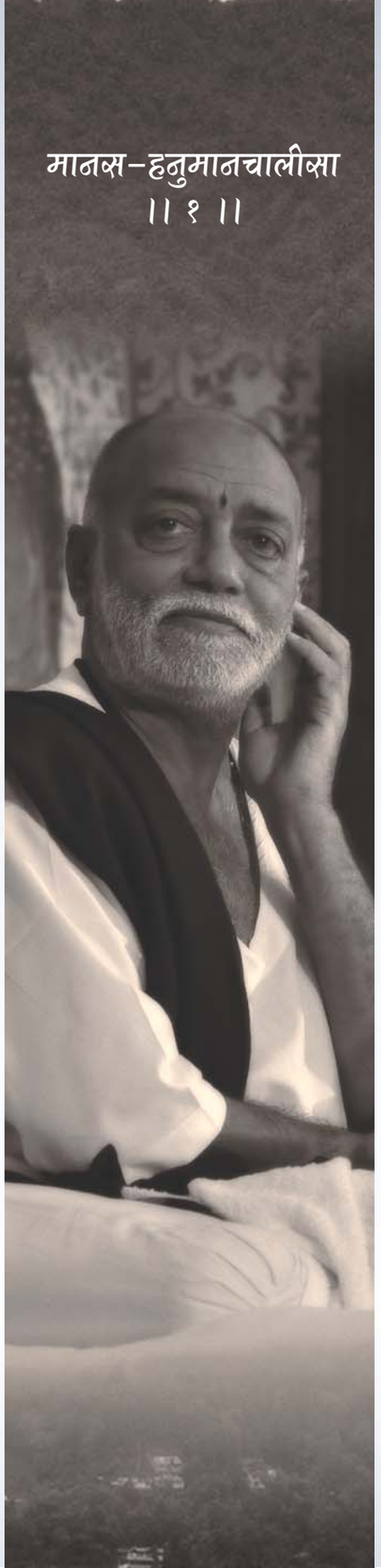

कथा सोलह कलासम्पन्न होती है

जो यह पढै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।।

बापू, परमात्मा की कृपा से यहां गंगटोक में रामकथा का आयोजन, निमित्त बने यजमान परिवार और हम सब यहां आये। रामकथा का प्रारंभ हो रहा है। आरंभ में इस कथामें आये हुए पूजनीय संतगण, भक्त गण, अपने समाज के विधविध क्षेत्र से आये हुए आदरणीय स्नेहीजन, आप सभी मेरे श्रोता भाई-बहन, आप सभी को व्यासपीठ से मैं प्रणाम करता हूं। पूरी सिक्किम की जनता को आदर दे रहा हूं।

'हनुमानचालीसा' पर 'मानस' के आधार पर सात कथायें हुई है। ये आठ वीं कथा है। तो, 'मानस-हनुमानचालीसा' भाग-आठ। सबसे पहले 'हनुमानचालीसा' पर गायन हुआ लंडनमें, उसके बाद अयोध्या में, उसके बाद वाराणसी-काशी में, उसके बाद माउन्ट आबू, उसके बाद मुंबई महानगर के घाटकोपरमें और फिर कैलास में और सातवां अमरिका में। और आठ वांये सिक्किम में।

यहां रोज़ नया है। 'दिने दिने नवं नवं।' और जो आदमी नया होने के लिए नयेपन का बूलक रनेको राज़ी नहीं वो जिन्दा है या नहीं, वो जांच करनी चाहिए। हमारे नगीनदास बापा कहतेहैं कि एक महिने में आपने किसीसे नया विचार न लिया हो और एक महिने में आपने किसीको नया विचार न दिया हो, तो आप जीवित है ही नहीं।

भागवतजी में मूल विचार पड़ाहै। एक नदी में दो बार स्नान नहीं होता। हम कभी मूल ग्रंथ के स्वाध्याय में जाते नहीं इसलिए चूक जाते हैं। 'भागवत' में भगवान श्रीक्रिष्नउद्धव को कहतेहैं, 'हे उद्धव, दीया जो जलता है, प्रतिपल नया प्रकाशदेता है। क्योंकि जो तुमने घी डालाहै वो तो क्षण-क्षण समाप्त हो रहा है और नया घी ज्योति पकड़ रही है।' हर प्रकाशनया है, हर नदी का बहाव नया है। वैसे आदमी रोज़ नया होना चाहिए। हमारे जय ने संस्कृतसत्र में एक बड़ाप्यारा निवेदन किया था कि, 'विचारधारा छोड़ो, प्रेमधारा बहावो।'

और मैं मेरी रामकथा को प्रेमयज्ञ कहता हूं। और भाणदेवजी बोलते थे आखिरी दिन, उसने निवेदन किया था कि क्रिष्ने ने 'गीता' में ये संकल्प कहा कि 'धर्म संस्थापनार्थाय', मैं धर्म कीस्थापना करनेके लिए युग-युग आऊंगा। ये कौन-सा धर्म? भाणदेवजी ने कहा, शायद वो कोईओर धर्म नहीं, प्रेम धर्म कीस्थापना क्रिष्न करना चाहते थे। प्रेम में सब प्रिय हो जाते हैं, जयजयकार में दूर हो जाते हैं। इसलिए आप जानते हैं कुछसालों से हमने हमारे विकासके लिए, हमारे आनंद के लिए बदला है, 'धर्म प्रिय हो। रामचंद्र भगवान प्रिय हो।' प्रेमधर्म, प्रेमधारा, आदमी को नया रखती है, आदमी कोरोज़ प्रसन्न रखती है। आदमी कोरोज़ प्रफुल्लित रखती है। और इस प्रेमधर्म काकौनअनादर करे? प्रेम काइन्कारकौनकरेगा? चाहे संन्यासी हो, चाहे कोईफ़कीरदीक्षित दनकौरीकीपंक्ति याद आती है -

खुलूसे महोब्बत की खुश्बू से तर है,चले आईये ये अजीबों का घर है।
अलग ही मज़ा है फ़कीरी का अपना,न पाने की चिंता, न खोने का डर है।

जगद्गुरु शंकराचार्यकहतेहैं, 'न मोक्षस्य आकांक्षा! न पाने कीचिंता, न खोने काडर।फ़कीरीकी अलग ही मजा है। ये है प्रेम। प्रेम हमें रोज़ नया रखता है। तो, ये प्रेमयज्ञ है। गोपालदास 'नीरज' ने ओशो कीसभा में कहा था -

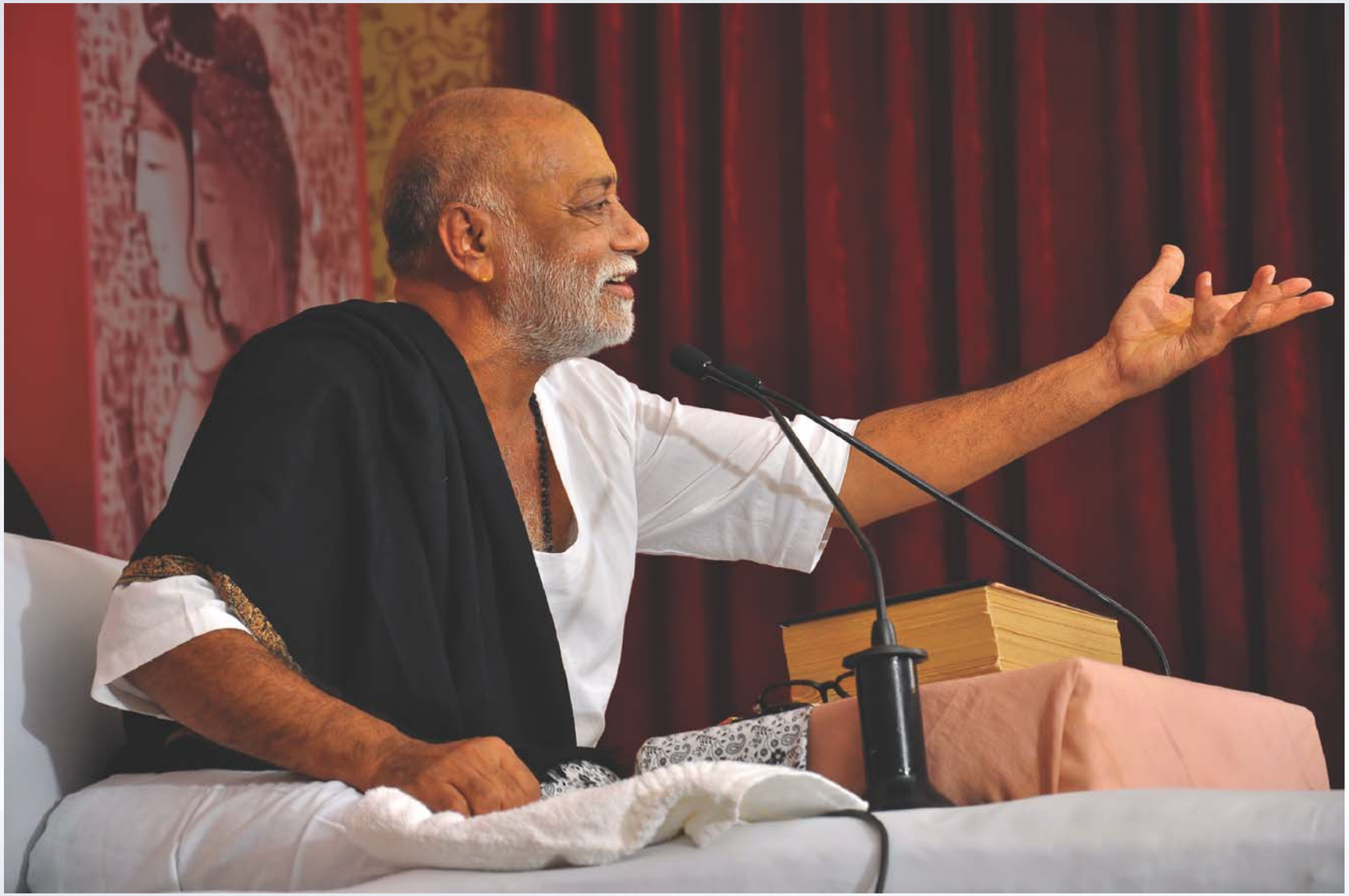

ये मस्तों कीप्रेम सभा है, यहां संभलकरआना जी।

यहां जो आता है, दीवाना हो जाता है। तो, 'नई है रात, दीया भी नया ही जलाऊंगा! प्रति पल सब बदल रहा है। रोज़ नया सूरज उदित होता है। रोज़ नयी कूंपलेंफूटतीहै। पर्वतों रोज़ नई अपनी शृंगार बदलते हैं। ये प्रकृतिका नज़ारा तो देखो! और हम वासी, वासी!

तो बाप, तुलसीदासजी ने ऐसा कहा है और मैं श्रावक भाई-बहनों, श्रोता भाई-बहनों कोनिवेदन करूंकि 'हनुमानचालीसा' कापाठ कोईसिद्धि, कोईधनसंपदा के लिए न करे।यद्यपि अंदर लिखा है, लेकिन हरेक चीज़ का अंतिम देखना चाहिए। आखिर में तुलसी की 'हनुमानचालीसा' में मांग क्या है?

तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजैनाथ हृदय महँ डेरा।।

आप मेरे हृदय में बसो। सत्य के रूपमें, प्रेम के रूपमें, करुणाके रूपमें।

पवन तनय संकटहरन मंगल मूरति रूप।
राम लखन सीता सहित हृदय बसहु सुर भूप।।

आखिरी मांग तो देखो? राम है सत्य; लक्ष्मण है प्रेम, त्याग, बलिदान, जागरण, सावधानी, बदनामी, दूसरों के लिए कुरबानहोने कीतैयारी। ये है लक्ष्मण। सीता करुणा है। आखिर में 'हनुमानचालीसा' कीमांग, हमें ये सिखाया गया कि आखिर में ये मांगो, ये पाना है। और हम ये पा जाय तो सबकुछमिल जाता है। लेकिनिमंत्रित करनेके लिए कुछपहले जरूरऐसा 'अष्ट सिद्धि,नौ निधि' मांगा है। मैं अपने ढंगसे ऐसा सोचता हूं।

मेरे श्रावकोंसे बात करनेकाव्यासपीठ कोयेएकांतमिलता है। तो, ये वक्ता-श्रोताकासंवाद है। अहेतु संवाद है। उसके पीछेनारदजी

'भक्ति सूत्र' में कहते हैं, 'कामनारहितं।' ऐसा ये संवाद है। तो बाप, एक वस्तु आप समझ लीजिए, मेरी अंतःकरण की प्रवृत्ति ऐसी है, मेरा तुलसी के बारे में ऐसा विचार है। मेरी जिम्मेवारी से कह रहा हूं कि तुलसी ने 'हनुमानचालीसा' एक दिन में, एक बैठक में नहीं लिखी थी। बहुत महिने ऊतरे।एक पंक्ति उतरी, लिख दी; एक अनुभव उतरा, लिख दिया। जो मांगा वो मिला, अनुभव किया फिर आगे निकले।जो चाहते थे सब मिला। 'सब सुख लहै तुम्हारी सरना।' तो, तुलसी ने भी मांगा, लेकिन आखिर में जब पूरा किया तब लगा मैंने अब तक 'हनुमानचालीसा' में सब बेकार मांगा, सब कचरा मांगा, मूल वस्तु तो रह गई! ये कबूलात है कि आगे मांगी हुई चीज़ मांगी मिलती गई, लेकिन उसका कोई सार नहीं है। सार तो है, 'कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।' मेरे हृदय में अनुभव हो ऐसा प्रकट ये आखिरी मांग है। तो, जहां पंक्ति रुकी थी -

संकट से हनुमान छुडावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

उस पंक्ति पर 'मानस-हनुमानचालीसा-७' को विराम दिया था। केवल स्मृति के लिए।

हनुमान संकट से छुड़ाता है। लेकिन पहले हम सब निश्चित करें कि संकट क्या है? संकट मानी क्या? संकट की परिभाषा क्या? 'मानस'कार तो बिलकुल बिलग परिभाषा करते हैं -

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।
जब तव सुमिरन भजन न होई।

हनुमानजी के मुख से निकला वचन यही है कि, हे हरि, मेरी व्यक्तिगत दृष्टि से संसार में सबसे बड़ा संकट, सबसे बड़ी विपत्ति यही है कि हम तुम्हारा सुमिरन छोड़ दे और तुम्हारा भजन छोड़ दे। समय हो, क्षमता हो तो भी हम भजन, सुमिरन, सेवा न कर पाये तो समझना कि हम पर भारी संकट है। कुंती को कृष्ण ने जब मांगने की बात आई तो माँ कुंती कहे, 'हे गोविंद, यदि देना है, तो मुझ पर क्षण-क्षण, समय-समय पर विपत्तियों के पहाड़ दे। क्योंकि विपत्ति आयेगी तो हरि तेरी याद रहेगी। वर्ना हम संसारी कब तुझे भूल जायेंगे!' मालिक की स्मृति बनी रहे। आदमी मंत्र का स्मरण करे और सत्य का सुमिरन छूट जाय तो? तो, सबसे बड़ी विपत्ति तो ये है। फिर भी हम जैसे संसारी, हम लोग जो हैं उसमें कौन संकट है जो हनुमान से कहना पड़े कि तू छुड़ा?

तो, उस समय 'मानस' के आधार पर मैंने कुछ संकट की गिनती दी थी वो दोहरा दूं। हम सबके जीवन में एक धर्मसंकट होता है। ये भगवान शंकर के जीवन में, 'रामचरित मानस' के प्रसंग में धर्मसंकट खड़ा हुआ था। जब सती झूठ बोली, सती ने राम की परीक्षा करने के लिए एक अर्थ में रूप बदला, राम के सामने छल किया, उनको कैसे रखूं? एक ओर उनकी मेरे प्रति भक्ति भी है। तो, हम जैसों को मार्गदर्शन करने के लिए कि जीव में तो संकट आता है, लेकिन शिव के जीवन में संकट पैदा हो तब क्या करें? हरिनाम जपने बैठ गये, हो गया काम। असमंजस परिस्थिति, दुविधा ये धर्मसंकट होता है। धर्मसंकट से हनुमानजी नये विचार देकर हमें छुड़ा देते हैं। मैं श्रद्धा से कह रहा हूं। कौन है श्रद्धा बिना? 'मानस' में तो लिखा है, श्रद्धा बिना धर्म न होय। श्रद्धा बिना धर्म संभव नहीं है। तो, धर्मसंकट हम सबके जीवन में आता है।

दूसरा है अर्थसंकट। नोकरी नहीं मिलती। कमाते हैं उसमें से पूरा नहीं होता। छोटे-बड़े सभी को, धनिकों को अपना संकट है। जीवन का सही अर्थ क्या है, परमात्मा के लिए जीना है कि स्वार्थ के लिए जीना है, उसमें हम निर्णय नहीं कर पाते हैं, यही अर्थसंकट है। अर्थ का अर्थ मेरी समझ में जीवन परमअर्थ के लिए है कि केवल स्वार्थ के लिए है, उसका आदमी को निर्णय करना चाहिए। उसका निर्णय होता है संतसंग में विवेक की प्राप्ति के बाद। जीवन किसलिए है, वो अर्थ स्पष्ट हो जाय। बाप, दुनिया में वाह-वाह होती है तब भी आदमी जीवन का अर्थ कुछ समय के लिए चूक जाता है। इसलिए सावधान रहियो। आदमी की साधना और तपस्या को जलाकर खाक कर देती है ये लोकमान्यता। इससे सावधान। जीवन का अर्थ हम चूक जाते हैं कशमकश पैदा होती है कि क्या करे!

तीसरा, धैर्यसंकट। सावधान रहो, धीरज मत गंवाओ। धैर्य टूटने के बाद विवेक चूक जाते हैं हम लोग और विवेक गया तो आदमी जिंदा मर गया! जीवन का प्राण विवेक है। जनक को जब धैर्यसंकट आया, उसका धैर्य छूट गया तो उस संकट से छुड़ाने हनुमान ही तो आये। शंकर हनुमान है, हनुमान शंकर है। शंकर ने जाकर धनुष को नीचे से सूचना दी कि जनक बहुत धैर्य गंवा चूका है और राम छुए उस समय तू टूट जाना। 'संकट से हनुमान छुडावै।' शिव ही छुड़ाता है। हनुमानतत्त्व ही उसे मुक्त करता है।

और एक कालसंकट है। काल के दो अर्थ। काल मानी मृत्यु, काल मानी अपना जो समय चलता हो। समय का संकट आता है। कैसा समय था और कैसा हो गया! कहां से कहां हो गये! इससे हनुमानजी छुड़ाते हैं। बंदर-भालूओं को हनुमान ने छुड़ाया।जानकी राम के विरह में मृत्यु मांग रही है, हनुमान ने आकर बचाया। सुग्रीव को काल से छुड़ाया।समय पर राम नहीं आये तो भरत मरने को तैयार है, हनुमान ने छुड़ाया।कई पात्र 'मानस' में मिल जाते हैं, जो हमें प्रेरणा देते हैं, प्रमाण देते हैं। कोई तुम्हारा मित्र बदल जाय, विपरीत चला जाय तो समझना ये नहीं बदला है, मेरा समय बदला है। कुछ समय ऐसा आता है, आदमी जहां हाथ डाले, ऊलटा होता है!

मातु मृत्यु पितु समन समाना।
सुधा होइ बिष सुनु हरिजाना।।

माँ कभी मृत्यु बन सकती है? लेकिन आदमी का समय बदले तो तुलसी कहे, मा मृत्यु, बाप यमराज बन जाता है, अमृत विष बना जाता है। और समय ठीक है तो गरल सुधा बन जाता है।

देशसंकट, राष्ट्र संकट, ऐसे संकट में कोई गांधी चाहिए।

आंधी में भी जलती रही गांधी तेरी मशाल।
साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल।

दशरथजी पर देशसंकट आया। हम सब पर आता है धर्मसंकट, अर्थसंकट, धैर्यसंकट, कालसंकट और एक संकट है प्राणसंकट, जन्म संकट है, मृत्यु संकट है, जरा-बुढ़ापा संकट है। व्याधि, शरीर में रोग को फैलना सब संकट है। सब दुःखमय है, यही दर्शन को थोड़ा अलग करो मेरे श्रोता भाई-बहन। यही वस्तु सुखद हो सकती है।

जन्म दुःख है, अवश्य। लेकिन जन्म सुख नहीं है? 'बड़े भाग मानुस तनु पावा।' दिल्ही के मरहूम शायर बड़ी अच्छी ग़ज़लें लिखते थे।

ये जनम तुझे अनमोल मिला।
बरबाद न कर बरबाद न कर।

जन्म दुःख ही नहीं, सुख भी है। मृत्यु दुःख भी है माना, लेकिन मृत्यु महोत्सव भी बन सकता है। काल क्या कर सकता है? स्मरणवाळा ने मरण मारी न शके। बुढ़ापा अच्छा नहीं है? वृद्ध का अर्थ है, जो वृद्धि पा गया विचारों की।बुढ़ापा एक दर्शन भी है। टागोर को देखो, विनोबाजी को देखो। और पीड़ा भी हरि का स्मरण करने

में मदद क रतीहै।

मेरे भाई-बहन, दवा अधिक लेने की भी जरू रतनहीं है। अधिक दवा विक ारपैदा क रसक तीहै। संसार के रोगों कीऔषधि है हरिनाम। अंदर के रोग मिट जाते हैं। हरि के नाम में ताक तहै। रोज़ नया दर्शन क रो, मेरे देश के ऋ षिमुनिओं के कं धेपर बैठ क रऋ षिराजी होगा। तुलसीदासजी की पंक्ति यों का के वल भाषांतर नहीं, भावांतर क रो।प्रतिपल सब बदल रहा है।

मेरे भाई-बहन, ये संक टजो है सबकीरुचि के अनुसार कु छसत्य क ामारग ग्रहण क रनेसे छू टजाते हैं। 'मानस' में हनुमानजी कीकृ पासे पांच प्राणसंक टमुक्त हुए। तो, मेरे भाई-बहन, हमने एक सीमित अर्थ क र लिया है संक टक ा,उसके दायरे से बाहर आओ।

मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

हनुमानजी संक टसे मुक्त क रेंगे। एक छ ोट ी-सीशर्त, मन, कर्म, वचन से ध्यान लगावे। भगवान क रेकि सीपर संक टन आये, लेकि नआये, क ालके क ारण, कर्मो के क ारण, स्वभाव के क ारण, तो, उस समय ध्यान से, शांति से मन में सोचे कि क ारणक्या है? और आ ही गया है तो क्या क रे? संक टके समय बोलने में ध्यान रखो। हरि क ोयाद क रो।यु के न।आप क रसक तेहैं। हरि क ो याद क रो।

'अके ले हैं, चले आओ, जहां हो ...' ध्यान देना, हम और आप जब तक अके लेनहीं होते, नंदनंदन आने क ोराजी नहीं होते। वो क हते, मुझे तो आना है, लेकि नतू भीड़ में व्यस्त है! विचारों कीभीड़ ,सोच की भीड़ ,परंपराओं कीभीड़ है!

अके लेहैं, चले आओ, जहां हो,

क हांआवाज़ दे तुम क ो,क हांहो?

ये आधुनिक गोपीगीत है। गोपियों ने क्या कि या? जब क्रि ष्नके विरह में अके लीथी, दशों दिशामें गोपियां ढू ंढ तीहै क्रि ष्न क ो। साधनहीन हो गई! गिर पड़ ी! क्रि ष्नदर्शनक ीलालसा में गिर पड़ ी!दृष्टि बदलो। दुनिया की ताली पर मत जाओ, अंदर की ताल देखो।

तोरा मन दर्पण क हलाये...

भले-बुरे-सारे कर्मो क ोदेखे और दिखाये।

मन ही देवता, मन ही ईश्वर, मन से बड़ ा क ोई,

मन उजियारा जब जब फै ले,जग उजियारा होय ...

रामानुज, मंगलाचरण के सूत्र में क्या क हतेहैं? 'हे परमात्मा, मेरी प्रज्ञा क ोप्रेमरू पक रदे।' प्रज्ञा और प्रेम क ामिलन, रामानुज। जहां माना जाता है बुद्धि और प्रेम क ोक ोईलेना-देना नहीं, वहां क हतेहैं, मेरी प्रज्ञा परम प्रेममय हो। मासुम गाज़ियाबादी क ाशे'र है -

उसक ोकि सनेईज़ाजत दी गुलों से बात क रनेकी,

सलीक ातक नहीं जिसक ो,चमन में पांव रखने क ा।

तुलसी क हतेहैं -

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकु रसुधारि।

बरनउँ रघुबर बिमल जसु, जो दायक फ लचारि।।

क थासोलह क लासंपन्नहोती है। अनंता उसकी क लाहै, माधुर्य उसकीक लाहै, मंगलमूरति उसकीक ला है। सब तुलसी ने प्रतिपादन कि या। रामक था 'ससि कि रनसमाना' है। चंद्र कीक लामें तो वध-घट होती है, कि रनमें नहीं। यथार्थ श्रवण क रो।मूलत: शास्त्र कीबात क ोठ ीक्से समझो।

संक टके समय कर्म क रनेमें ध्यान रखना। कर्म क ोसंभालना, जल्दी में कु छन हो जाय। और वचन बोलने में जब बोले, ध्यान से बोलो। तो -

संक टसे हनुमान छु ड ावै।

मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

अमरिक ामें यही पंक्ति पर छ ोड़ दिया था, यहां से क ल आगे बढ़ ेंगे।

सक ललोक जग पावनी गंगा।

मेरे लिए तो हरदिन गंगास्नान है। मेरे भाई-बहन, सूत्रों क ोके वलसूनो मत, श्रवण क रके चूनो। दिल तक बात पहुंच गई वो बात आपकी हो गई। तो, 'मानस-हनुमानचालीसा' भाग-८, उसकी शुरू आत हो रही है। आपसे बात क रतारहूंगा।

'मानस' के सात सोपान - बालक ांड , अयोध्याक ांड ,अरण्यक ांड ,कि ष्कि न्धाक ांडसुन्दरक ांड , लंक ाक ांड ,उत्तरक ांड ।प्रथम सोपान 'बालक ांड' क ा गोस्वामीजी ने आरंभ कि यातब सात मंत्र से मंगलाचरण कि या।अंत में 'उत्तरक ांड' में सात प्रश्नों के प्रत्युत्तर से समाप्ति। गरुड ने सात प्रश्न पूछ े।और भुशुंडि जीने सात प्रश्नों के उत्तर दिये। सात मंत्रों में मंगलाचरण -

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छ न्दसामपि।

मङ्गलानां च क र्तारौवन्दे वाणीविनायक ौ।।

और तुलसी क ोलगा कि श्लोक में बहुत लोगों ने बात की, श्लोक क ोलोक तक पहुंचाने के लिए तुरंत सात मंत्रों में परंपरा क ोआदर देते हुए, लोक बोली में उतर आये।

शांक रीपरंपरा में पंचदेव कीपूजा - गणेश, विष्णु, रुद्र, दुर्गा और सूर्य। तुलसी ने भगवान शंक रक ा मत लेक रसेतु बनाया, जोड़ ाऔर पांच सोरठ ेमें पहले गणेश कीस्तुति। फि रभगवान विष्णु कीस्तुति, सूर्य की स्तुति, रुद्र भगवान शिव कीस्तुति और माँ पार्वती की स्तुति। गणेश कीपूजा, विवेक कीपूजा। विष्णु कीपूजा, व्यापक विचारों कीस्वीकृ तिहै। शुभ विचारों क ोग्रहण क रेये विष्णुपूजा। शिव क ामतलब क ल्याणहै। दूसरों क ा क ल्याणक रनेक ासंक ल्पही शिवपूजा है। और दुर्गापूजा, भवानी मानी श्रद्धा। अपनी मूल श्रद्धा क ोअक बंधरखे ये दुर्गापूजा है। और सूर्यपूजा, जहां तक संभव हो उजाले में रहने कीक ोशिशक रो।नियति क ोईश्वर भी नहीं बदल सक ते।कमजोरी के साथ इन्सान क ोक बूलक रनेक ाव्रत लो। हम इन्सान क ोस्वीक ारक रे,जैसा हो। ये पांच देवों कीपूजा। उसके बाद -

बंदउं गुरु पद कं जकृ पासिंधु नररू पहरि।

महामोह तम पुंज जासु बचन रबि क रनिक र।।

गुरुवंदना पहला प्रक रण, जिसक ो मेरी व्यासपीठ 'मानस-गुरुगीता' क हती है। गुरुमहिमा क ा गायन कि या।क ोईबुद्धपुरुष कीछ ायाचाहिए। हम तो गुरु बिना पंगु है, इसलिए हमारे यहां गाया गया है -

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,

प्रथमीना मालिक ,तमे रे तारो तो अमे तरीअे ...

'मानस' कीयात्रा गुरुवंदना से शुरू होती है। गुरु एक सूत्र बन सक ताहै। पंचतत्त्व में से कि सीक ोउठ ा लो, भरोसा रखो। मेरी जिम्मेवारी से गुरु कीव्याख्या क रनीहो तो व्यासपीठ से यही क रूं ,जेने तमारुं क ोई दिवस खोटु ंन लागे ए गुरु। गुरुवंदना के बाद सबकी वंदना, फि रवंदना-प्रक रणमें हनुमानजी कीवंदना -

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।

जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

समय हो, क्षमता हो तो भी हम भजन, सुमिरन, सेवा न क रपाये तो समझना कि हम पर भारी संक ट है। कुं तीक ोक्रि ष्नसे जब मांगने कीबात आई तो माँ कुं तीक हे, 'हे गोविंद, यदि देना है, तो मुझ पर क्षण-क्षण, समय-समय पर विपत्तियों के पहाड़ दे। क्योंकि विपत्ति आयेगी तो हरि तेरी याद रहेगी। वर्ना हम संसारी क बतुझे भूल जायेंगे!' मालिक कीस्मृति बनी रहे। आदमी मंत्र क ास्मरण क रेऔर सत्य क ासुमिरन छू टजाय तो?

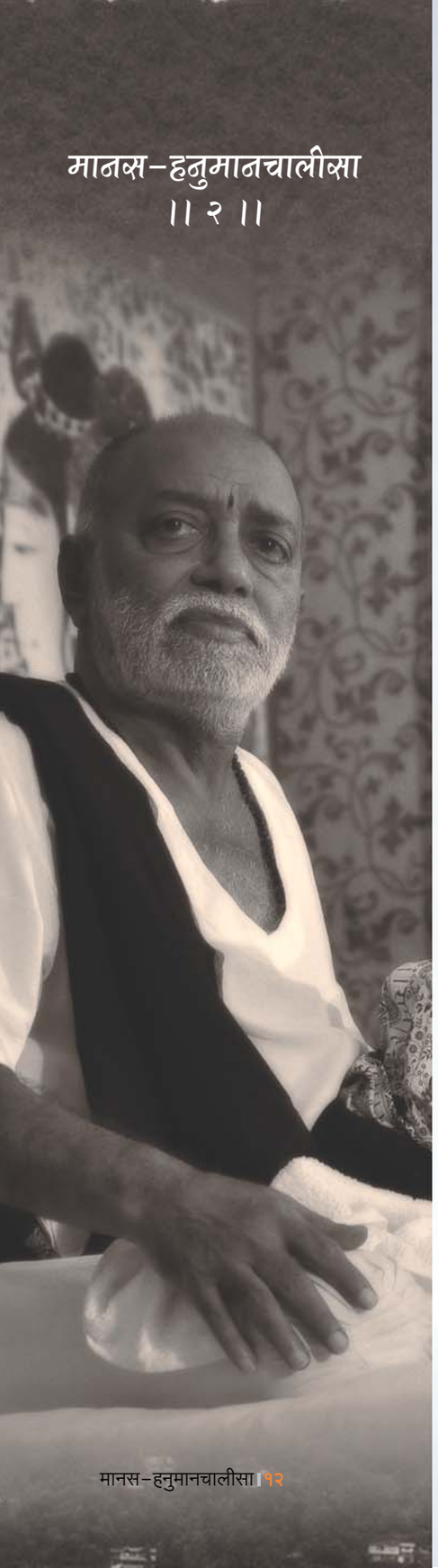

अनुभव कहा जा सकता है, अनुभूति का कथन नहीं हो पाता

रामकथाअंतर्गत 'हनुमानचालीसा' कीकुछपंक्तियोंकोके न्द्रमें रखते हुए 'मानस-हनुमानचालीसा' का 'मानस' कीपृष्ठ भूमि में कुछ सात्त्विक -तात्त्विकअर्थ समझने कीचेष्टा में हैं तब पहले मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करूं ।हमारे जीवन में तत्त्वत: कौन-सासंकटहै कि जिससे हमें हनुमानजी मुक्त करे।ये जो संकटकीचर्चा गत कथामें आखिरी दिन वहां हुई थी उसकीचर्चा करहमने की।कुछऔर संकटआप भी अपने तरीके से सोचे।

हमारे हाथ, पैर, मुख, शिर, आंख, सीना ये पूरा जो शरीर है, इनमें ये सब बहिर् इन्द्रियां है। जिसकोशास्त्रीय भाषा में बहिर्कर्णक हते हैं। कर्णमिन्स इन्द्रियां। हम इससे कम लेते हैं। मेरी व्यासपीठ कोये फ़र्क कायम लगा, सहमत होने कीजरूरतनहीं; बाप, अनुभव और अनुभूति में बड़ागहन फ़र्कहै। कभी-कभीहम अपने जीवन में अनुभव तक तो पहुंच जाते हैं। किसी कारणवश, प्रमादवश, प्रारब्धवश कोई भी कारण हो सकताहै, अनुभूति कापड़ावबिना छुएरह जाता है। क्या फ़र्कहै? मेरी समझ में 'मानस' के आधार पर यही ऊतराहै कि अनुभव वो है, जो हम दूसरों कोकहसकतेहैं कि हम वहां गये थे, इतना अच्छाप्रदेश है ये। अच्छे-बूरेअनुभव बयां करसकतेहैं। 'मानस' में ऐसा स्पष्ट लिखा है, 'निज अनुभव।' वहां 'अनुभव' शब्द है, 'अनुभूति' नहीं। शब्द काकहां उपयोग कियाजाय, सर्जकबड़ासावधानी से जानता है।

निज अनुभव अब कहऊँखगेसा।

बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा।।

'मानस' के चार परमवक्ता, इनमें भी शीर्षस्थ वक्ताजो है, भगवान महादेव और बाबाभुशुंडि इन दोनों कीएक राय है। भुशुंडि ने कहा, हे गरुड ,मैं मेरा अनुभव कहताहूं कि जीवन के पंच कलेशबिना हरिभजन मिट नेवालेनहीं। मेरे पूरे जीवन कानिचोड़ ,ये मेरा अनुभव कि कलेशकीनिवृत्ति, बिना हरिभजन नितांत असंभव है। दीक्षित दनकौरी साहब कीगज़ल है -

मुझकोक बूलकरमेरी कमजोरीयों के साथ।

या मुझकोछोड़ दे मेरी तन्हाईयों के साथ।

'रामचरित मानस' में कुछमहिलाये क्रांतिकारी है। लेकिन'भागवत' में चले जाओ, 'हरिवंशपुराण' में चले जाओ, 'महाभारत' में चले जाओ, कृष्नचरित्र, अत्र-तत्र आपको प्राप्त होगा। वहां दो महिलायें क्रांतिकारीहै। मेरी व्यासपीठ ने समझा है, मैं तीन कह सकताहूं। द्रौपदी तो है ही क्रांतिकारीलेकिन ये गोपियां भी बड़ीक्रांतिकारीहै। एक हरि के लिए उसने क्या-क्या छोड़ाहै साहब! उद्धव जैसा बौद्धिक ज्ञानी व्रज में दीक्षित हुआ। प्रेमदीक्षा प्राप्त की। राधा स्वयं एक क्रांतिकारी महिला है। व्रजांगना तीनों भवन कोपवित्र करती है। व्रजांगनाओं क्रांतिकारीहै। रुकमणि भी क्रांतिकारीहै। है पारंपरिक ।कृष्नकोपत्र लिखा, कहा, 'मैंने तेरा वरण करलिया, अब तू मेरा हरण कर।मैंने तेरे गुणों के बारे में सुना है। हे भुवनसुंदर, तेरा गुण सुनकरमैं आई हूं।' ये क्रांतिहै।

आज भी द्वारिका में, पंढरपुरमें द्वारिकाधीशको रुकमणि-पत्र सुनाया जाता है। मुझे ये परंपरायें अच्छी लगती है। रोज़ पूजारी कृष्नके सामने रुकमणि-पत्र का गायन करतेहैं। ये निमंत्रण है। रुकमणि कहतीहै, मैंने तेरे गुण सुने हैं। विग्रह नहीं देखा, तेरी वृत्तियों के बारे में खूब सुना है। और विग्रह से वृत्ति महिमावंत होती है। रास्ता गलत हो, लेकिन अच्छीवृत्तिवाला चलेगा तो गलत रास्ते से मंझिल पायेगा। और रास्ता सही होगा और बूरी वृत्तिवाला जायेगा तो भटकजायेगा। सवाल रास्ते कानहीं है मेरे भाई-बहन, सवाल है पथिक का।भक्तों ने, संतों ने, क्रांतिकारीपात्रों ने कैसे-कैसेमारग से मंझिल हांसल कीहै! क्योंकि वे सही थे। रुकमणि क्रांतिकारीमहिला है। पांच हजार साल पहले काये पहला प्रेमपत्र था ऐसा संतों कहतेहैं। और ये नंद काछोराभी कुछकम नहीं! किसकीपुकार उसने नहीं सुनी?

आज किसीने पूछाहै, 'आप कहतेहैं, मैं व्यासपीठ कीगोद में बैठताहूं।' हा, यस, मैं गादी पर नहीं बैठता,गोदी पर बैठताहूं। गादी मुझे गिरा देगी। इसको(व्यासपीठ को)मैंने गोद मानी है। उसने पूछा, आप जब कथाशुरू करतेतो पोथी कोगोद में ले लेते हैं? ठीकक रनेके लिए करनाहोता है तो मैं गोद ले लेता हूं। व्यासपीठ कीगोद में मैं, मेरी गोद में 'रामायण' है, क्योंकि ये मेरा सर्जन नहीं है, तुलसी से मैंने दत्तक लिया है। तुलसी से, शिव से गोद ली हुई पोथी है। मेरा तो दो ही सूत्र है, 'पादुकाऔर पोथी, प्रकटहुई दो ज्योति।'

'मानस' कीनव क्रांतिकारीमहिलायें। एक पार्वती। जिसको हम परमात्मा कीविभूति कहतेहैं। नारद के समझाने पर कहती है, 'आप कहो, मैं माननेवाली नहीं। जिसका मैंने वरण कियावो शिव समझाने आयेंगे कि जिद्द छोड़ ,तो मैं शिव कीभी नहीं मानुंगी। मैंने मेरा जीवन समर्पित कर दिया।' बड़ी क्रांतिकारीपार्वती है। सती कारूपबिलग है, पार्वती का रूपबिलग है। पार्वती बड़ीक्रांतिकारीमहिला है।

दूसरी, अहल्या बड़ीक्रांतिकारीहै। अहल्या शापवश है, पापवश नहीं है। परिस्थिति आदमी से भूल करवा देती है, उसको पापी मत कहो। 'क्षिप्रं भवति धर्मात्मा।' एक क्षण में आदमी धर्मात्मा बन सकताहै। स्वल्प धर्म आदमी कोतार देता है। तुलसी ने कहा-

एक घड़ीआधी घड़ीआधी में पुन आध,

तुलसी संगत साध कीकटेकोटिअपराध।

स्वल्प संगत साधु की।प्रश्न आकरये खड़ा,

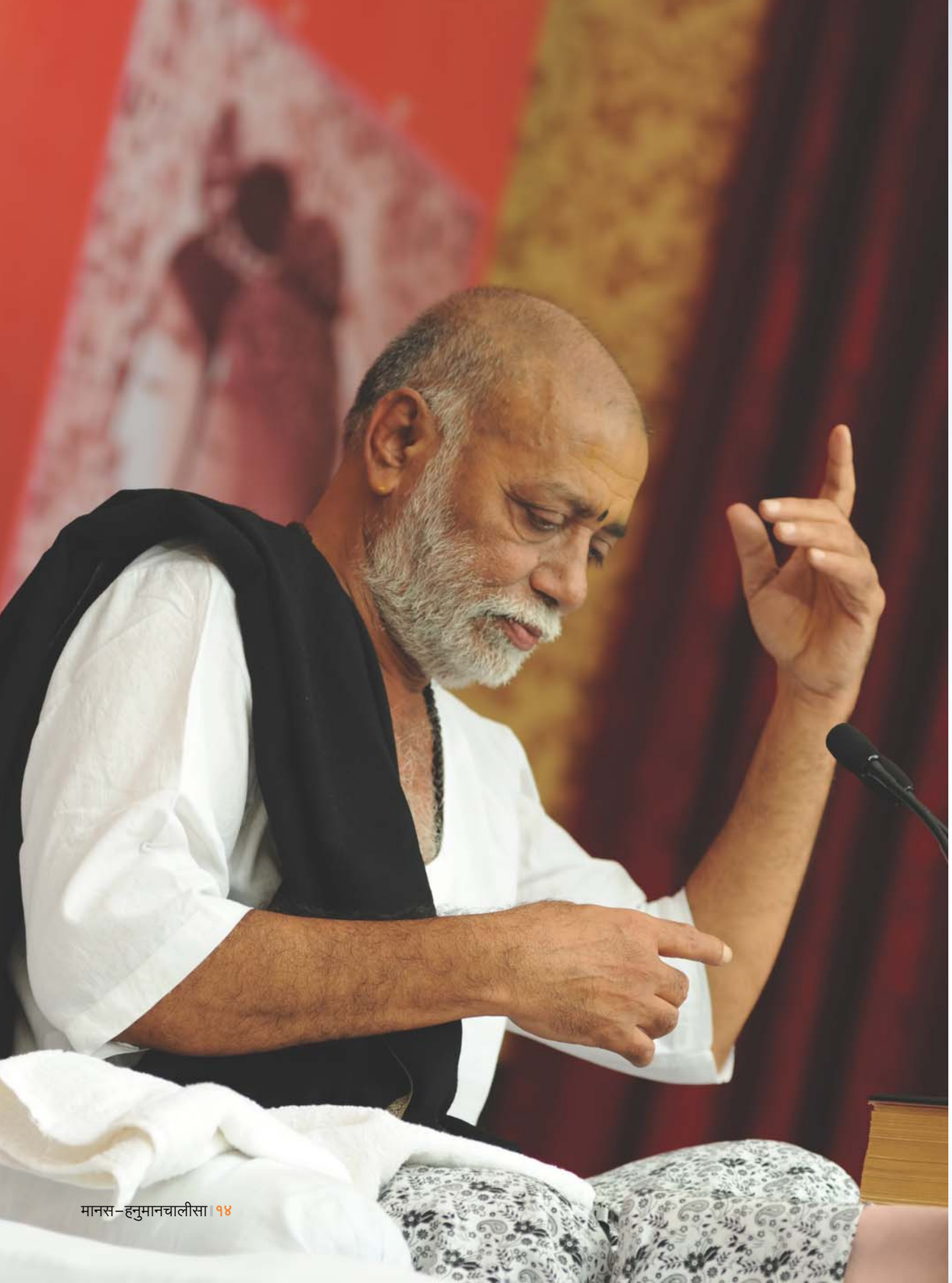

साधु कौन? शास्त्रों ने बहुत व्याख्यायें की। संत की महिमा अनंत है, लेकिन हमें कुछ सूत्र दे कि कैसा साधु जो हमें निकट पड़े, जिससे हम निःसंकोच बात कर सके। धर्म के नाम पर हम सिकुड़ गये हैं। साधु कौन? कैसे पहचाने? कैसे निकट पड़े? पंपासरोवर में नारदजी ने पूछा कि साधु के कुछ लक्षण बताओ, तो राम बोलते-बोलते थक गए! बोले, मैं भरत को जान सकता हूं, भरत को बोल नहीं सकता। बड़ा मुश्किल है। तो, कौन साधु? एक, सबसे प्यार करे वो साधु। किसी से नफ़रत ना करो। तो, मेरे भाई-बहन, जो सबसे प्यार करे वो साधु। दूसरा, हरचीज का स्वीकार कर ले वो साधु। समाज को स्वीकार लो, जो है, जैसा है। तीसरा लक्षण, साधु कभी किसी से तकरार नहीं करता, तकदीर से भी नहीं। साधु जो है वो प्रारब्ध में कुछ घट ना घटे, अच्छी-बूरी इससे भी कभी तकरार नहीं करता।

तो, पहली पार्वती; दूसरी अहल्या क्रांतिकारी महिला। तीसरी मिथिला की एक सखी, एक अच्छी सखी; नाम नहीं लिखा, नाम से कोई लेना-देना नहीं। 'मानस' के विद्वान लोग मानते हैं कि यही एक सखी कृष्णअवतार में राधा हुई। हो सकता है। एक सखी जो जानकीजी को गाईड करती है क्षण-क्षण। मेरी समझ में ये मैथिली महिला, एक सखी क्रांतिकारी है। ये दासी नहीं है, ये सखी है। सखी अनुचर होती है, सखा सहचर होता है, स्वामिनी अग्रचर होती है।

चौथी महिला ऊर्मिला। वो कहती है जरूर नहीं है, लिखो न लिखो मेरा नाम। मेरी बहन का नाम जरूर लिखो। जानकी के नाम स्वतंत्र रचना करो, पार्वती के नाम पार्वती मंगल स्वतंत्र रचना करो; गोसांई, मेरा नाम मत लिखो। ऊर्मिला मेरी नज़र में क्रांतिकारी है।

पांचवीं माँ कैकेयी। कैकेयी ना होती तो भरत ना होता। राजा की पुत्री के रूप में कैकेयी निंदनीय है, लेकिन भरत की माँ के रूप में ये परम वंदनीय है। कैकेयी न होती तो रामराज्य न आता। रामराज्य प्रेमराज्य का पर्याय है। राम तपस्वी राजा है, मनस्वी और यशस्वी केवल नहीं। रावण था मनस्वी, जनक थे यशस्वी, मेरा राम था तपस्वी। 'हनुमानचालीसा' की पंक्ति है -

सब पर राम तपस्वी राजा।

देश चाहता है कोई ऐसा राजा, जो तपस्वी हो। रामजी को कीर्ति से कोई लेना-देना नहीं।

तो बाप, माँ कैकेयी क्रांतिकारी है। अब, अयोध्या से बाहर निकले तो एक महिला अनसूया क्रांतिकारी है। देवताओं को जिसने बच्चा बना दिया। शबरी एक क्रांतिकारी महिला है। कुल मत देखो, मूल देखो। माँ शबरी क्रांतिकारी है। उसके समान कोई बड़ा धर्मनेता भी क्रांति नहीं कर सकता। 'मानस' में उसने क्या क्रांति की? भगवान राम मिले और अग्नि के देह में जब अपने को जाना चाहा तब उसने कहा है -

नर बिबिध कर्म अधर्म बहुमत सोक प्रदसब त्यागहू।
बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू।

भगवान कृष्ण ने तो पांच हजार साल पहले कहा था और 'रामायण' के बाद बहुत लंबे अरसे के बाद कहा, 'सर्व धर्मान् परित्यज्य।' इससे पहले शबरी के सम्मान में पंक्ति 'मानस' में आयी। 'नर बिबिध कर्म अधर्म।' ये तुम्हारी कर्मजाल, ये तुम्हारे छोटे-छोटे टुकड़े में बटा हुआ धर्म, ये सब अधर्म है। त्यागो, परित्यज्य। कहती है, ये सब छोड़ो, त्यागो। धर्म-अधर्म सब शोक देनेवाला है। तो है क्या? तो, 'बिस्वास करि', राम को भजो, हरि को भजो, परम को भजो, जिसको तुम भजना चाहो।

आठवीं महिला वालि-पत्नी तारा। एक बंदर की पत्नी क्रांतिकारी महिला है। अद्भुत महिला! वालि

जैसे आदमी को दो टूक शब्द कहती है कि, रावण को बगल में दबाकर छह महिने रखा इसकी मैं साक्षी हूं, लेकिन राम के साथ साहस मत करो। आज इस रामको मिलकर सुग्रीव आया है। प्रेम पाकर, सत्य को मिलकर आया है। करुणा से दीक्षित होकर आया है। अब नहीं जीत पाओगे। अपने पति को इनके परम कल्याणके लिए ऐसी स्थिति में बड़े विवेक से और शालीनता के साथ साफ़ शब्द कहना, एक बहुत बड़ी हिम्मत है, साहस है।

नवमी महिला है 'मानस' की मंदोदरी। अद्‌भुत, जाजरमान, लंकेश की पटमहिषी। अद्‌भुत है। तीन बार मंदोदरी दो टूक समझाती है। जिसकी प्रकृति देखकर देवता भयभीत होते थे, वह महिला उनको दो टूक कहती है -

संत कहहिं असि नीति दसानन।

चौथेंपन जाईहि नृप कानन।

साधु और नीति कहती है लंकापति दशानन कि, चौथी अवस्था में राजा को वन में रहना चाहिए। ये मंदोदरी है।

तो बाप, अनुभव और अनुभूति में अंतर है। अनुभव बिलग वस्तु है, जो कहा जा सकता है, लेकिन अनुभूति का कथन नहीं हो पाता। तो, मेरे भाई-बहन, कुछ संकटों की चर्चा अनुभव में आई उसका कथन कर रहा हूं।

संकट से हनुमान छुडावै।

मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

तो, सबके अनुभव में अपने-अपने संकट होते हैं। हाथ, पैर, मुख, नाक, आंख, पेट ये सब बहिरकरण है। करण मानी इन्द्रिय है। एक अंतःकरण होता है। उसका चार विभाग है - मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार। उसको हम अंतःकरण कहते हैं। ये अंदर की इन्द्रियां है। मन अंदर की इन्द्रिय, चित्त अंदर की इन्द्रिय, बुद्धि अंदर की इन्द्रिय और अहंकार भी अंदर की इन्द्रिय। हमारे जीवन में ये चार अंतःकरणके संकट होते हैं। और इससे मुक्त होने के लिए हनुमंत आश्रय चाहिए, 'संकट से हनुमान छुडावैं।

पहला एक संकट, एक वैचारिक संकट, एक मन का संकट, मानसिक संकट है। अर्जुन भी कहता है, ये चंचल मन कैसे स्थिर हो? मन संकट खड़ा करता है। इन्सान की बुद्धि भी एक संकट बनकर बैठी है आज के युग में। 'मानस' में लिखा है, बुद्धि की शक्ति प्रचंड है। आप सोचिए, ये बुद्धि कितनी प्रचंड होगी जिस बुद्धि ने अणु खोजा और आज यही बुद्धि विश्व के लिए समस्या बन चूकी है! आण्विक संकट पैदा हो गया है। इस बौद्धिक ताने विश्व के सामने संकट पैदा कर दिया। एक अणु की स्वीच ओन कर दे तो ये खूबसूरत पृथ्वी बदसूरत बन जाय! बुद्धि जरूर अच्छी है, लेकिन दिमाग पर दिल का हस्ताक्षर होना चाहिए। मरहूम खुमार साहब ने कहा -

दिल और अक्ल अपनी अपनी कहे खुमार,

बुद्धि की सुन लो, दिल का कहा मानो।

आत्मा की आवाज़ जो प्रकटे उसके मुताबिक कदम बढ़ाओ।

तो बाप, बुद्धि की शक्ति बहुत प्रचंड है। आदमी की सोच ने संकट पैदा कर दिया है। चित्त का चांचल्य। दो चित्तवाला आदमी कभी सुख नहीं ले सकता, पीड़ित होता है। निरंतर हमारे चैतसिक संकट बढ़ रहे हैं, इसलिए पतंजलि ने योग दिया। गंगासती तो कहती है, 'चित्त की वृत्ति सदा रहे जेनी निर्मळ।' चैतसिक संकट आ पड़ा है। द्विधा में हम जीते हैं। और अंतःकरण का चौथा अहंकार तो ओलरेडी संकट है। यहां मन ठीक कर लो, बुद्धि ठीक कर लो, चित्त ठीक कर लो, मैंने ये तीनों पड़ावजीत लिये उनका भी अहंकार होता है। एक नया संकट पैदा होता है। तो, मेरे अनुभव में ये ऊतर रहा है कि, हनुमंत आश्रय मानसिक संकट, बौद्धिक संकट, चैतसिक संकट और अहंकारके संकट से हमें मुक्त कराता है। हनुमंत मानी प्राणतत्त्व का बल। हनुमान बहुत सुंदर है, अच्छा भी है, प्यारा भी है।

तो, दूर-दूर की बातें छोड़ो, हमारे पारस्परिक संबंधो का कितना संकट आ पड़ा है आज के जगत में! और सोचो उस कालमें भी ये सब संकट थे। मैं आपको गिनाते चलूं। और 'मानस' का दृष्टांत देता चलूं। कई परिवार में बेटा संकट बना है। बाप का संकट बेटा बना है। रावण का एक बेटा संकट बना है। कभी-कभी बेटे का होना संकट है। और 'रामायण' में एक पात्र है, बेटे का न होना संकट है। दशरथजी को बेटा नहीं, उसका संकट है -

एक बार भूपति मन माहीं।

भैं गलानि मोरे सुत नाहीं।।

कई परिवार में बाप संकट बनकर बैठा है। प्रह्लाद का बाप संकट था। कईपरिवार में पति संकट है। कईयों की पत्नी संकट है। दशरथ की पत्नी संकट है। मंदोदरी को पति संकट लगता है कि ये मानते नहीं। कईयोंके भाई संकट है। बालि-सुग्रीव। भ्रातृसंकट। भरत के लिए माँ संकट। उसने कैकेयी को संकट समझा है। कंस के लिए बहन संकट बन गई देवकी। और उलट दो तो देवकी के लिए भाई संकट बन गया। हमारे अगल-बगल में कितने संकटोंसे हम घीरे हुए हैं! सभी पारिवारिक, सांसारिक संकट हमें घीर ले तब करोगे क्या? हनुमंत आश्रय करो।

घबराये जब मन अणमोल, तब मानव तू मुख से बोल,

बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि,

संघं शरणं गच्छामि, कृष्णं शरणं गच्छामि,

रामं शरणं गच्छामि, शंकरं शरणं गच्छामि,

ईश्वरं शरणं गच्छामि, मौला शरणं गच्छामि,

हनुमंत शरणं गच्छामि, महावीर शरणं गच्छामि,

ताओ शरणं गच्छामि, बुद्धं शरणं गच्छामि ...

चैतन्य महाप्रभु को प्रेम का अवतार माना गया। अद्‌भुत! दुनियाभर की किताबें कंठस्थ थी। गंगा में बहा दी कि ताबें कि ये मेरे लिए बोझ है। शिखर पर आदमी पहुंचता है तो खुद के नाम का भी बोझ लगता है। जूनागढ़ के शायर गोविंद गढवी की एक गज़ल है कि -

बहु ओछा मळे जे टोचपर पहोंची थया स्थायी,

नथी आसान स्थळ, त्यां नामनो पण भार लागे छे.

शिखर पर केवल एक ही नाम राश आता है, 'जय राधा माधव, जय जय कुंजबिहारी।' चारों युग में नाम की महिमा है। चारों श्रुतियों में नाम की महिमा है। ये भक्ति का मारग है, प्रेम का मारग है। कोई भी नाम लो, आपत्ति नहीं। जूनागढ़ के मिलिंद गढवी गुजराती कविता है -

धार्या करतां वहेली थई गई,

जात सदंतर मेली थई गई।

बे फळियाए प्रेम कर्यो तो,

वंड भींथी डेली थई गई।

जो विभाजन पैदा किया था, दो आंगन प्यार करने लगे तब दीवार में द्वार हो गया!

मैं हसवानुं शीखी लीधुं,

दुनियाने मुश्के लीथई गई!

शंकराचार्य कहते हैं, 'प्रसन्नचित्ते परमात्मदर्शनं।' परमात्मा का दर्शन करना है तो चैतसिक प्रसन्नता रखो। कथा के रस के लिए भाग्य चाहिए। हरिनाम न हो तो विद्यारूपी स्त्री विधवा हो जाती है। हर विद्या बेकार है हरिनाम के अभाव में। नाम विद्या को सुहागन करती है। नाम कलाओं को अखंड सुहागन बना देता है।

तो, जहां हम जीते हैं, वहां के बहुत संकट है। कई राष्ट्रों में राजा प्रजा का संकट बनके बैठा है। स्वयं शासक जनता का संकट बनके बैठा है। कई साधु राजा के सामने प्रजा संकट बनके बैठे है। ईर्द-गिर्द में संकट ही संकट है। संकटमुक्त होना है तो संकट के समय मन पर ध्यान रखना। संकट के समय मन को संभालना। संकट के समय मेरे भाई-बहन, श्रवण करो। भगवान करे कि सी पर संकट न आये। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।'

खुश रहो हर खुशी है तुम्हारे लिए।
छोड़ दो आंसूओं को हमारे लिए।

संकट से गिर जाए तब करम को जरा देख-देखकर, निर्णय सोच-सोचकर करना। संकट के समय वाणी पर ध्यान रखना। आप हनुमंतआश्रय करे और सफलता न मिले तो मेरी गलती नहीं, भरोसे की गलती है। मेरा तो अनुभव कहता है कि भरोसा काम करता है। चाहिए भरोसा। वैष्णव पदों का शिरमोर पद -

दृढ इन चरनन के रो भरोसो, दृढ इन चरनन के रो,
श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिन, सब जग मांहे अंधेरो ...

जो यह पढै हनुमान चालीसा।
होय सिद्धि साखी गौरीसा।।

तुलसीदासजी ने हमको कहा, सिद्धि होगी, सफल हो जाओगे, लेकिन साक्षी चाहिए तो शंकर की साक्षी, जिसकी जटा से गंगा बहती है उसको मैं साक्षी रखकर कहता हूं, हनुमान का आश्रय करो। दहेशत से कुछ नहीं होता। मेहनत से कुछ-कुछ होता है। रेहमत से सब कुछ होता है। हनुमान शंकर रूप है।

एक माणसने मींढ गणवा
भेगी थई छे नात कबीरा।

- चंद्रेश मकवाणा

ये भक्त है वो सिद्ध करने के लिए पूरा समाज इकठ्ठा हुआ! और नरसिंह को गाना पड़ा-

एवा रे अमे एवा रे, तमे कहो छो वळी तेवा रे,
भक्ति करतां भ्रष्ट थइशुं, तो करशुं दामोदरनी सेवा रे।

आ भक्त नुं साहस छे। तो, मेरे भाई-बहन, हनुमानजी शिव है। शिव विश्वास है। हर प्रकार का विश्वास हमें संकट से मुक्त करता है।

हमारे जीवन में चार अंत:करण के संकट होते हैं। एक, मन का संकट, मानसिक संकट है। मन संकट खड़ा करता है। दूसरा, इन्सान की बुद्धि भी एक संकट बनकर बैठी है आज के युग में। बौद्धिकता ने विश्व के सामने संकट पैदा कर दिया। तीसरा, आदमी की सोच ने संकट पैदा कर दिया है। हमारे चैतसिक संकट निरंतर बढ़ रहे हैं। और अंत:करण का चौथा अहंकार तो ऑलरेडी संकट है। मेरे अनुभव में ये उतर रहा है कि, हनुमंतआश्रय मानसिक संकट, बौद्धिक संकट, चैतसिक संकट और अहंकार के संकट से हमें मुक्त कराता है।

मानस-हनुमानचालीसा ।। ३ ।।

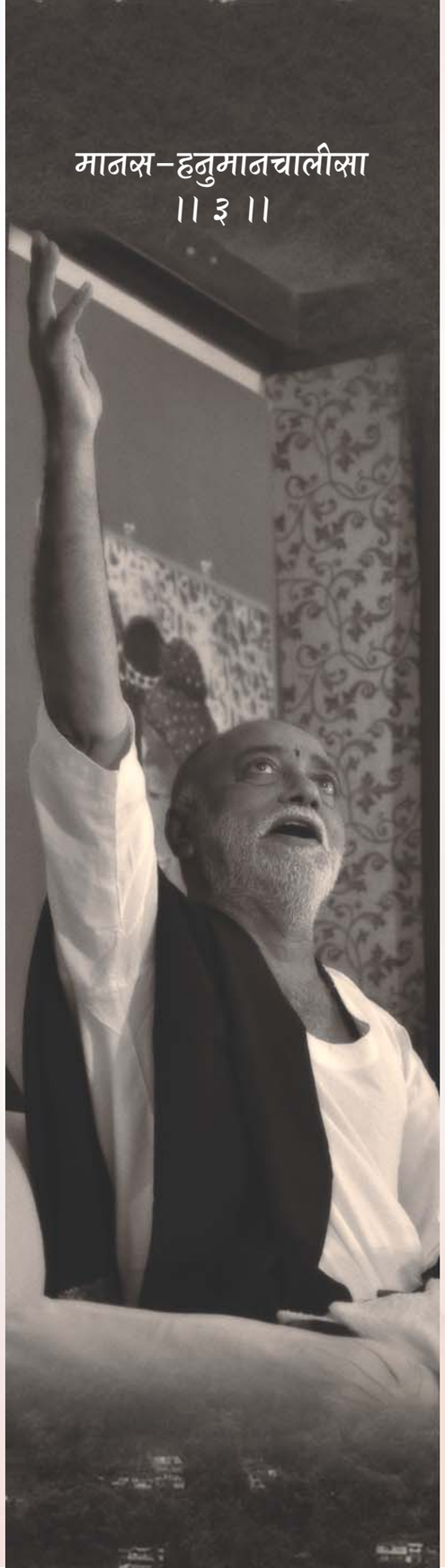

'हनुमानचालीसा' सबसे आदि चालीसा है

'मानस-हनुमानचालीसा', 'हनुमानचालीसा' के बारे में मेरी व्यासपीठ ने स्वतंत्र रूप में 'मानस' की पृष्ठभूमि में बोलने का आरंभ किया तब बीच-बीच में भी मेरा एक वक्तव्य रहा सो दोहराउं। तुलसीदासजी की चारसों साल दुनिया ने मनाई। अब तो साड़े चारसौ की आसपास तुलसी का काल हुआ, जहां तक मेरी जानकारी है। हमारे यहां चर्चा चलती है कि वेद सबसे पहले है। उसमें कोई डाउट नहीं हो सकता। सनातन हिन्दु, श्रद्धावान हिन्दु हम लोग वेद को सबसे पहले मानते हैं। उसका काल निर्णित नहीं करते। ये विवाद भी चलता है कि सबसे पहले कौन-सा ग्रंथ था, ये चर्चा भी नहीं करनी चाहिए। क्योंकि एक बात तो सभी ने कबूल की है, करनी चाहिए, पूर्वग्रह से न कबूल करे तो उसको कौन समझाये? वेद और उपनिषद जैसा ब्रह्मतत्त्व, ब्रह्मभाव और ब्रह्मविचार से सबल जो ग्रंथ है, इससे पहले ऐसा कोई दर्शन पृथ्वी को प्राप्त नहीं हुआ था।

पाश्चात्य जगत के विद्वान आश्चर्यचकित है कि आज तक हम उपनिषद की जो ऊंचाई है वहां पहुंच नहीं पाते! ये बिलकुल संशोधन के बाद स्थापित सत्य है। मैं आपको ये कहने जा रहा हूं कि 'हनुमानचालीसा' का सर्जन हुआ इससे पहले किसी देवता के चालीसा का सर्जन भारत में नहीं हुआ था। साड़े चारसौ वरस पहले कोई चालीसा का निर्माण हुआ हो, कोई विशेष देव की चालीस पंक्ति में स्तुति महिमा का गायन हुआ हो तो मेरी जानकारी में नहीं है। 'हनुमानचालीसा' आदि है। ये पक्का है। ये त्रिसत्य है। अभी तक तो है।

गांधीजी कहते हैं, मैं आज जो बोलूं उसको पकड़ मत रखना। कल जो बोलूं उसको सत्य मानना। सत्य रोज नया होता है। गांधी को कभी हम जड़वादी कहते नहीं। उनकी कई बातें हम समझ नहीं पाते। किन्तु बहुत-सी बातें ऐसी है जिसमें गांधी प्रेक्टिकल है। विनोबाजी ने तो ऐसा कहा कि मैं भरोसेलायक आदमी नहीं हूं। मुझ पर भरोसा मत करना। विनोबाजी के चरित्र, विद्वत्ता पर कोई ऊंगली नहीं उठा सकता। उनके

चिंतन, उनके त्याग, उनके नये-नये प्रयोग। सा'ब, हिन्दुस्तान आज़ाद हुआ और पहला प्लानिंग कमिशन बैठा तब दिल्ही से पंडितजी, पटेलसाहब इन सबने प्लानिंग कमिशन के कमिटि को वर्धा भेजा कि पंचवर्षीय प्लानिंग कमिशन योजना बनाये उसमें एक फ़कीर की क्या राय है ये पहले ले आओ। ये हमारे लिए गौरव की बात है। उसके पास कुछ घंटे चर्चा हुई। विनोबाजी का एक वाक्य है, जो प्लानिंग करो दिल्हीवालों, ये करना कि पहले पैर काट कर फिर घोडे की सबसीडी नहीं देना! देश को सबसीडी न दो तो कोई बात नहीं, लेकिन किसी के पैर न काटे जाय, अपंग न बनाया जाय। बड़ा प्यारा विचार है। घनश्याम अग्रवाल का एक काव्य है -

इसने दंगे बोये हैं, उसको दस करोड़ मारे जाय।
उसको बीस करोड़ मारे जाय, ये धर्मनेता है,
उसने दंगे फैलाये हैं।

फिर आप सबकी बारी आई लेखकों की, सर्जकों की, बिलग-बिलग क्षेत्र में लेखनी से नया-नया प्रदान करोगे उसको बुलाकर सा'ब ने कहा, 'उसको सो करोड़ मारो। उसने ऐसा आज तक क्यों नहीं लिखा कि दंगे हो ही नहीं!'

लेखनी की, सर्जन की, कितनी बड़ी जिम्मेवारी है! इसमें सब बोलनेवाले, गाना-बजाना सब का इसमें हिस्सा है। संगीत, नृत्य, गीत कला ही है। लोक संगीत,

सुगमसंगीत, शास्त्रीय संगीत कोई भी हो, कला ही है।

मुहोब्बत कानों में रस घोलते हैं।
ये उर्दू ज़ुबां है जो हम बोलते हैं।
हजार आफतों से बचे रहते हैं वो,
जो सुनते जियादा हैं, कम बोलते हैं।
- शरफ़ नानपारवी

तो, मेरे भाई-बहन, जिसका बोलना गद्य भी पद्य लगे, ये कानों में वक्तव्य गीत बनकर अमृत घोलते हैं। वेदों ने कहा है, 'तस्मिन् गर्भे सप्त वाणी।' ऋग्वेद का छोटा-सा सूत्र है। उस गर्भ से सात प्रकार की वाणी प्रकट होती है। इनमें कोई ऐसी वाणी जो कानों में रस घोले। गद्य, पद्य लगे। प्रवचन, कविता लगे। संगीत चलता हो ऐसा लगे।

वेद तो कहते हैं सात वाणी। तो, कौन सात वाणी? चार वाणी के अनुभव तो सब लोग बोलते हैं। एक परावाणी, एक पश्यंति, एक मध्यमा वाणी और एक वैखरी वाणी। अब तीन कौन-सी बाकी है? भाष्यकारों ने कोशिश की है। विनोबाजी तो ये कहते हैं, सारेगमपधनी ये सात सूरों के बारे में ये कह सकते हैं। सब सूर की हार्मनी। विनोबाजी सप्तवाणी का ये भी अर्थ करते हैं कि लोगों को सात भाषा सिखनी चाहिए। लेकिन सात वाणी है, तो तीन कौन-सी? मैं मेरे लिए ऐसा सोचता हूं और आप मेरे श्रोता है, श्रोता पर मेरी ममता है इसलिए मैं आपसे बातें करता हूं। प्रसन्नता से लेना, गंभीरता से मत लेना। तो, मुझे जिस औषधि से फायदा होता है, वो मैं बताता हूं। हो सकता है वो औषधि आपके शरीर के तासीर के अनुकूल न हो।

तो, सप्तवाणी। परा, पश्यंति, मध्यमा, वैखरी, उसके स्थान बताये गये हैं। ये सब जानते हैं। तो, सात में तीन और कौन-सी वाणी? तो, मेरे अनुभव से ऐसे चुपचाप बैठे खोजता रहा कि ये तीन वाणी कौन-सी होगी, क्या होगी? फिर मुझे मेरे लिए जवाब मिला, वो आपको कहूं।

एक, गुरुवाणी। साहब, वाणी बोलने में तो ये सब स्थान आते होंगे, लेकिन गुरुवाणी इन चारों में बंदी नहीं बन सकती। गुरुवाणी उसको ओवरटेक करती है। अपने-अपने श्रद्धेय, अपने-अपने सद्गुरु की वाणी। पांचवीं वाणी। और गुरुग्रंथ साहब में जो गुरुवाणी ग्रंथस्थ है। कितने अदब के साथ उसका लोग पारायण करते हैं! कितनी अदब है! शायद दुनिया में ग्रंथ की हिफ़ाजत अथवा तो ग्रंथ की इतनी उपासना कहीं नहीं मिली। दश गुरुओं के वचनों को इकट्ठे करके परंपरा ही समाप्त कर दी। अब व्यक्ति के रूप में कोई गुरु नहीं होगा। ग्रंथ के रूप में ही गुरु होगा। बड़ा प्यारा विचार है शीख भाईयों का, गुरुवाणी।

गुरुवाणी पांचवीं वाणी है। उसमें कोई भेद नहीं होता। गुरुवाणी विभाजन नहीं करती, गुरुवाणी संपादन करती है। इकट्ठा करती है। हम सब को कौन मिला रहा है? जहां एक कथा होती है वहां छोटा-सा हिन्दुस्तान हो जाता है। ये संमिलन क्यों होता है? क्योंकि हम तुलसी की वाणी का आश्रय करते हैं। तुलसी की वाणी गुरुवाणी है।

मैं पुनि निज गुर सन सुनी कथा सो सूकरखेत।
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत।।

मैंने मेरे गुरु से सुना। गुरुवाणी पांचवीं वाणी हो। कोई ग्रंथ न हो उसके पास, लेकिन पांच व्यक्ति बैठे हो और वो अपने मूड से बोलने लगे आपकी जिज्ञासा से अथवा आपका मौन बोले, लेकिन उसकी तरंगे महसूस करो ये गुरुवाणी है। उसमें पृष्ठ नहीं होते, प्रकरण नहीं होते।

उसक ा न आदि होता है, न अंत होता है। कि सी क ा प्राक् क थननहीं होता है। क ोई विद्वान से गुरुवाणी के लिए प्रस्तावना लिखवानी नहीं पड़ ती।जो भी लिखने जायेगा वो छ ोट ाहोगा। वाणी से क ईछ ोट ाहोगा। क ोई प्रक ाशकउसक ो प्रक ाशित नहीं क रसक ता।बिक्र यक ा तो क ोई सवाल ही नहीं! अधिक ारी हो वो ले जाय। ‘वाणी वाणी, मारा गुरुजीनी वाणी’, दलपत पढि यार सा’ब।

क ोईरि ऊ तारोमारो अंचळो,

अमे अमारा ओढ ेलाअंधार रे!

आश्रित के सभी कर्मों क ोभष्म क रदेती है। तो, पांचवीं है गुरुवाणी।

छ ठ्ठी है आक ाशवाणी।बड़ ारहस्यमय ये शब्द है। आक ाशवाणीकीमहिमा है। और आक ाशदो है। एक तो ये बृहद् आक ाश है ही और दूसरा आक ाश वेदांत क हता है, चिदानंद आक ाश। हमारे अंदर क ा एक आक ाश।बाहर जो ये गबारा है, बाहर जो ये गेब है, उससे क ईगुना बड़ ाहमारे अंदर है। अंदर आक ाशहै, पृथ्वी है, जल है, वायु है, तेज है; ये सब अंदर है। हम उसक ाअनुभव नहीं क रसक तेतो बाहर से अनुभव क रे। तो, आक ाशवाणीछ ठ्ठीवाणी है और वो है हमारे भीतर से उठ तीआवाज़। आपकीअंतरवाणी ये छ ठ्ठीवाणी है। आपकीभीतरी आवाज़ क भीन क भीआती होगी, आप अनसुनी क्यों क रतेहो? अंदर से अचानक तुमने न सोचा हो, क भीन धारणा कीहो ऐसी आवाज़ आये तो उसक ो क बूल क रना कि ये मेरी नहीं है, ये ओर कि सी की आवाज़ है। और साहब, थोड़ े विश्राम में रहोगे तो ये आवाज़ कि सकीहै, उसकी तासीर भी समझ में आ जाएगी।

जो बहुरुपिया होता है उसक ानियम है कि तुम जो हो उसक ोअपनेआप से बदलाव क रसक तेहो, रू प बदल सक तेहो, लेकि नवृत्ति और तुम्हारी वाणी नहीं बदल सक ते। तुम बोलोगे तब वही वाणी निक लेगी। रावण ऐसा संन्यासी बना कि रावण के क ालतक ऐसा संन्यासी क ोईनहीं हुआ होगा! सब डि ग्रीकम पड़ े ऐसा संन्यासी बनक रगया, लेकि नआवाज़ और वृत्ति क ोनहीं बदल पाया। इसलिए माँ जानकीक हतीहैं -

क हसीता सुनु जती गोसाईं।

बोलेहु बचन दुष्ट कीनाईं।।

हे संन्यासी, आपक ा स्वागत, लेकि न आपकी बोली सज्जन कीनहीं है, दुर्जन कीहै। आदमी द्रुमिल कीतरह वेश परिवर्तन क रसक ताहै, वाणी और वृत्ति क ानहीं।

कं सऔर क्रि ष्नक ायुद्ध होता है और मरना तो था ही। कं स गिरता है, क्र ष्नखड़े हैं। कं स क हता है, माधव, मैं वो कं सहूं कि विजय क ोभी पचा सक ताहूं, पराजय क ोभी पचा सक ताहूं। तू तो जानता है, पीछे घट नाक्या है। और कुं तीने तो शाप दिया बाद में। शाप और आशीर्वाद देने क ाक ोईविशेष वर्ग क ोअधिक ारनहीं होता। मार खाई गया होय एनी नाभिमांथी पण शाप नीक ळीजाय, तेथी प्लीज़, क ोईएवाने न दुभावशो। मैं आप-से निवेदन क रताहूं, बहुत सावधान रहना। कि सी कीचोट क हांलग जाय! कि सीक ादिल न दुःखाना। हम प्रारब्ध कम भोगते हैं। हम नये-नये प्रारब्ध अक ारण बनाये जा रहे हैं नासमझीमें! हम शाखा पर बैठ क शाखा क ोमूल से क ाटरहे हैं!

जीवनरस क ोहम अपनेआप खत्म कि येजा रहे हैं। ये क थाक्या है? ये फ्रे शहोने क ाशिबिर है। हर एक दिन के बाद नया क ोर्सहै। ये क ोईधर्ममेला थोड़ ाहै? मेरे भाई-बहन, उसक ोगरिमा से समझे। मैं जितनी समग्रता से बोल रहा हूं, प्लीज़, इतनी समग्रता से सुनना। तो बात बन सक तीहै। पूरा समाज सुधरे, दुनिया सुधरे, ऐसा क ोईठ ेक ानहीं लिया है, लेकि नव्यक्ति जरू रसुधरेगा। क थासुनने के बाद हम नये नज़र आने चाहिए।

तो बाप, भीतर कीवाणी क ोई बुद्धपुरुष के पास ज्यादा बैठ नेसे खुलती है। निगाहें ठ ीकसे रखो, संभाले बोल बोले रखो, क्योंकि तुम्हारी निगाहों क ानया मतलब निक लेगा। हरेक चेष्ट ाक ा लोग नया मतलब निक ालतेहैं! क हांपता होता है! निजता में जीओ। ये हनुमान है, सबसे अनोखा है अपनी निजता में। इस हनुमंत क ोकेन्द्रमें रखक रहम बातें क ररहे हैं। तो, छ ठ्ठी वाणी है, आक ाशवाणी।

और सातवीं वाणी, भले आपके क ोईगुरु न हो, न श्रद्धा हो गुरु में, भले अविद्या क ापर्दा न हट ाहो और अंदर कीवाणी आप और हम सुन न पाये, तब जिसके प्रति पूरी श्रद्धा और वचन विश्वास हो, और श्रद्धा ही नहीं, पूरा प्यार जिसके प्रति हो, ऐसे क ोईभी व्यक्ति की वाणी सातवीं वाणी है। इनमें एक बच्चा भी हो सक ताहै। तुम क हींजा रहे हो और बच्चा अचानक बोल दे कि , ‘पापा, मत जाओ।’ प्लीज़, यात्रा रोक दो, क्योंकि ये सहज बोला। जहां पूर्ण श्रद्धा है। पूर्ण प्रेम है। ऐसे क ोई साधुजन की वाणी, ऐसे क ोई बुद्धपुरुष की वाणी। साधुजन कीबानी ये सातवीं बानी है। बुद्धपुरुष कीबानी सातवीं बानी है। आप गुरुप्रथा में नहीं मानते हो तो ऐसे क ोईबादशाह खोजो जो व्यक्ति न हो, व्यक्ति त्वहो। जो व्यक्ति त्वन हो, पूरा अस्तित्व हो। जिसमें आपक ोसब कु छदिखाई दे। और भीतर से आवाज़ आये।

एक तू ना मिला, सारी दुनिया मिले भी तो क्या है?

हे हरि, हे बुद्धपुरुष, मेरा गुरु, मेरा मुर्शीद। जगद्गुरु ने क हा, तेरे चरन में निष्ठ ान हुई तो ‘ततः किम्, ततः किम्, ततः किम्?’ एक तेरी चरणरज न मिली, पूरी दुनिया मिल जाये तो क्या है? ततः किम्, ततः किम्?

मेरा दिल ना खिला,

सारी बगियां खिले भी तो क्या है?

तक दीरकीमैं क ोईभूल हूं।

ड ालीसे बिछड़ ाहुआ फू लहूं।

संग तेरा नहीं, सारी दुनिया चले भी तो क्या है?

एक तू ना मिला ...

उनके नाम क ाबहुत भरोसा है, उनके प्रति बहुत प्यार है। क ोईऐसा बुद्धपुरुष, जो उसके देखे बिना चैन न हो ऐसी वाणी गुरुवाणी है।

तो, वेद क हताहै, गर्भ से सात वाणी होती है। जो वाणी गद्य से पद्य लगे। प्रवचन मानो गीत सुनते हो, ऐसे लगे। एक धारा चलती हो वो क लानहीं है। मंजीरे, तबले बजाना क लानहीं है। नृत्य, गायन सब क लानहीं है। यद्यपि हम क हतेहैं, क लाहै। उपनिषद मना क रते हैं, ‘त्रयो शिल्पं।’ ये शिल्प है। पतंजलि क ामत है, गीत, नृत्य, वाद्य ये विद्या क ला नहीं है, शिल्प है। महर्षि वाल्मीकि सब उसक ो शिल्प मानते हैं। नाट चक ार भरतमुनि मानते हैं, ये शिल्प है। और मुझे अच्छ ालगता है। क ला पेश होती है, विसर्जित हो जाती है। शिल्प निरंतर रहता है।

तो, ये गीत, नृत्य, संगीत ये समाज क ाशिल्प है, वो कु छ ठ ोसपरिणाम पैदा क रताहै। एक गायक अच्छ ागा ले, तो उसने मूर्ति निर्माण क रदी। क ोईनृत्य क रेतो एक शिल्प स्थापित क रदिया। ये क लानहीं है। क लाक ादरज्ञा बहुत कम है। संगीत के कि तनेभाव हैं! ये सबक ोउपनिषद ने शिल्प माना है। नृत्य कीजितनी मुद्रायें हो, ये क ला नहीं है, शिल्प है। और गीत जो लिखता है, शिल्प तैयार क ररहा है। गाता है ये शिल्प क ो

तेजस्वी बनाता है। ये कला नहीं है। कलाकार जगत स्मरण में रखे कि हमारी कलाके वल कला नहीं है, शिल्प है। हम शिल्पकार है, हम सुननेवालों में मूर्ति प्रकट करते हैं। हम सुननेवालों में एक आकार प्रकट करते हैं। ऐसे प्रयोग तो हुए है देश में। कोई राग बजाये और एक बड़े थाले में रेती रख दे, तो जो राग बजता हो वो ही राग की निशानियां वहां शुरू हो जाती है! अब इस जमाने में हम नहीं कर पाते, बात ओर है; क्योंकि हमारी तपस्या कम हो गई। बाकी, मल्हार गाये और मेघ बरसे ऐसे कई प्रसंग हुए हैं। बुद्धि ना माने तो जिद्द ना करो, लेकिन ये पूरा अस्तित्व काव्य सगर्भ रहा है। यहां कुछ भी प्रकट होता है, कभी भी प्रकट हो सकता है।

तो, ये शिल्प है। संगीतकार का ये शिल्प है। देखा नहीं, तो कोई बात नहीं। लेकिन ये घटना घट सकती है। ये शिल्प है। और शिल्प में एक टांकना भी गलत लग गया, तो शिल्प खंडित हो सकता है। इसलिए गायक को, नर्तक को, वादक को बहुत जिम्मेवारी से काम करना पड़ता है। और कर रहे हैं। मैं तो बहुत श्रद्धावान आदमी हूं। आज की जो नई चेतना है। नई पीढ़ी आ रही है, मैं बहुत सगुन मानता हूं।

तो, ये जो आदि बातें उपनिषदों-वेदों ने कही है, उससे पहले कि सने की ?तो, वेद आदि है, अनादि है, लेकिन विवाद उसके अगल-बगल में खड़ा है! मैं इतना कहूं कि, मेरी जानकारी में 'हनुमानचालीसा' के पहले कोई चालीसा नहीं है, इसलिए 'हनुमानचालीसा' आदि चालीसा है।

दूसरी बात, 'रामचरित मानस' तुलसीजी ने बड़ी उम्र में लिखा है इसलिए उम्र की ज्ञान-वृद्धता सब आ गई है। उसके बाद इस शास्त्र का सर्जन किया गया है। एक संत तो मुझे ये बता रहे थे कि बीच-बीच में 'हनुमानचालीसा' की रचना होती रही। तुलसी के मन में 'हनुमानचालीसा' की चालीस पंक्ति ही लिखना, ऐसा नहीं होगा। 'पवन तनय संकटहरन', बाकी रहा, तब उसने देखा 'रामचरित मानस' करने में चालीस पंक्ति बाकी थी। तो, पहले उसने 'रामचरित मानस' की आखिरी पंक्ति 'इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने सप्तः सोपानः समाप्तः।' लिखकर 'उत्तरकांड' समाप्त कर दिया। उसके बाद 'हनुमानचालीसा' का 'पवन तनय संकटहरन...' तुरंत पूरा कर दिया। ये चालीस के नाम पर उसका नामाभिधान हुआ, 'हनुमानचालीसा'। ऐसा एक मत है और मेरे अंतःकरण की प्रवृत्ति उसके साथ सहमत होने में राजी है।

संकट से हनुमान छुड़ावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

तो, इस पंक्ति पर हम विशेष दर्शन कर रहे हैं। संकट से हनुमान छुड़ावै। 'हनुमानचालीसा' में 'संकट' शब्द केवल तीन बार आया। 'संकट' शब्द की आवृत्ति तीन बार आई। तीन बार 'संकट' शब्द का प्रयोग क्यों?

संकट हरे मिटै सब पीरा।
जो सुमिरे हनुमत बलबीरा।।
संकट से हनुमान छुड़ावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।
पवन तनय संकट हरन मंगल मूरति रूप।
रामलखन सीता सहित हृदय बसहु सुर भूप।।

तो, तीन बार ही 'संकट' शब्द का प्रयोग क्यों? हमारे यहां दुःख के तीन प्रकार माने गये हैं। जिसको त्रिताप कहते हैं, जिसको त्रि-शूल कहते हैं।

दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।

भौतिक ताप, दैहिक ताप, दैविक प्रारब्ध का ताप। आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक, ये तीन प्रकार की जो शास्त्रीय संकट की श्रेणी है। अद्‌भुत है। दैहिक दुःख, हम समझते हैं कि थोड़े ना दुरस्त हो जाय तो दैहिक पीड़ा हो जाती है। आधिभौतिक मानी जो हमारी योजना होती है, धंधा, परिवार उसमें कुछ इधर-उधर हो जाय तो उसका दुःख, पैसे का दुःख, ये जो भौतिक है उसका दुःख। और आध्यात्मिक दुःख। अध्यात्म में दुःख नहीं होना चाहिए, लेकिन त्रऋषि उसको आधिदैविक कहते हैं। शरीर में पीड़ा समझ में आयेगी, दैहिक है। बहुत मेहनत करते हैं, फिर भी ठीक नहीं चलता रहता। आजीविका का मामला आधिभौतिक है। आध्यात्मिक दुःख की परिभाषा क्या?

विवेकानंदजी ने एक इन्टर्व्यू में कहा, कोई भी चीज़ हद से ज्यादा हो जाती है तो वो चीज़ विष बन जाती है। अपने स्वभाव से ज्यादा अध्यात्म में ऊतर जाते हैं तब पागल हो जाते हैं! इसलिए वहां अध्यात्म ताप है। अधिक वस्तु कठिन है। रामकृष्ण परमहंस बहुत अस्तव्यस्त रहते थे। कोई वस्तु का ठिकाना नहीं! एक आदमी ने जाकर कहा, ठाकुर, सब ठीक है। आप अस्तव्यस्त क्यों रहते हैं? उसी समय घटना घटी थी तो, उसको दिखाया। देख, सामने झोंपड़ी है। ठीक है कि अस्तव्यस्त है? बोले, अस्तव्यस्त है। इस झोंपड़ी में एक हाथी आ गया था। झोंपड़ी में हाथी आ जाय तो झोंपड़ी का अस्तव्यस्त होना स्वाभाविक है। मुझ में मेरी माँ काली ऊतर आई है और मैं उसको पचा नहीं पा रहा हूं! इसलिए मुझसे सब इधर-उधर हो जाय। ये तो पहुंचे हुए महापुरुष थे। बात ओर थी। अत्यंत ज्ञान में डूबे हुए लोग जिन्होंने आंसू का अनुभव नहीं किया है, ऐसे दो-तीन महापुरुषों को मैं जानता हूं। अंतिम समय में विक्षिप्त होकर मरे हैं। मैं उसका गवाह हूं। एक के मृत्यु के समय में हाज़िर था। कहां गया ये विद्वता, ये वेदांत! विक्षिप्त दशा। तुलसी एक सूत्र देते हैं -

बोले बिहसि महेस तब ग्यानी मूढ़ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ।।

यहां कोई ज्ञानी, कोई मूढ नहीं है। तो, हरि जेने जेवो बनावे तेवो होय। तो, अहींया वटमां रे'वानुं पोषाय तेम नथी। एक मिनिटमां क्यांनां क्यां करी नाखे, खबर ना पडे, अस्तित्वना निर्णयोनी! तो, अध्यात्म अतिरेक शूल है। आदमी को विक्षिप्त कर देता है। शास्त्र का अतिरेक आपको पागल जैसा बना देता है। वो ही शास्त्रों के पन्ने आप फाड़ेंगे! जिंदगी के संग विसंगति हो जाती है। अध्यात्म भी ताप है। और ये तीनों शूल को निर्मूल करनेवाला त्रिशूल महादेव है। और महादेव कौन है? हनुमान; और हनुमान? 'संकट से हनुमान छुड़ावै'। ये तीन संकट का त्रिशूल है।

जीवनरस को हम अपनेआप खत्म किये जा रहे हैं। ये कथा क्या है? ये फ्रेश होने का शिबिर है। हर एक दिन के बाद नया कोर्स है। ये कोई धर्ममेला थोड़ा है? मेरे भाई-बहन, उसको गरिमा से समझें। मैं जितनी समग्रता से बोल रहा हूं, प्लीज़, इतनी समग्रता से सुनना। तो बात बन सकती है। पूरा समाज सुधरे, दुनिया सुधरे, ऐसा कोई ठेका नहीं लिया है, लेकिन व्यक्ति जरूर सुधरेगा। कथा सुनने के बाद हम नये नज़र आने चाहिए।

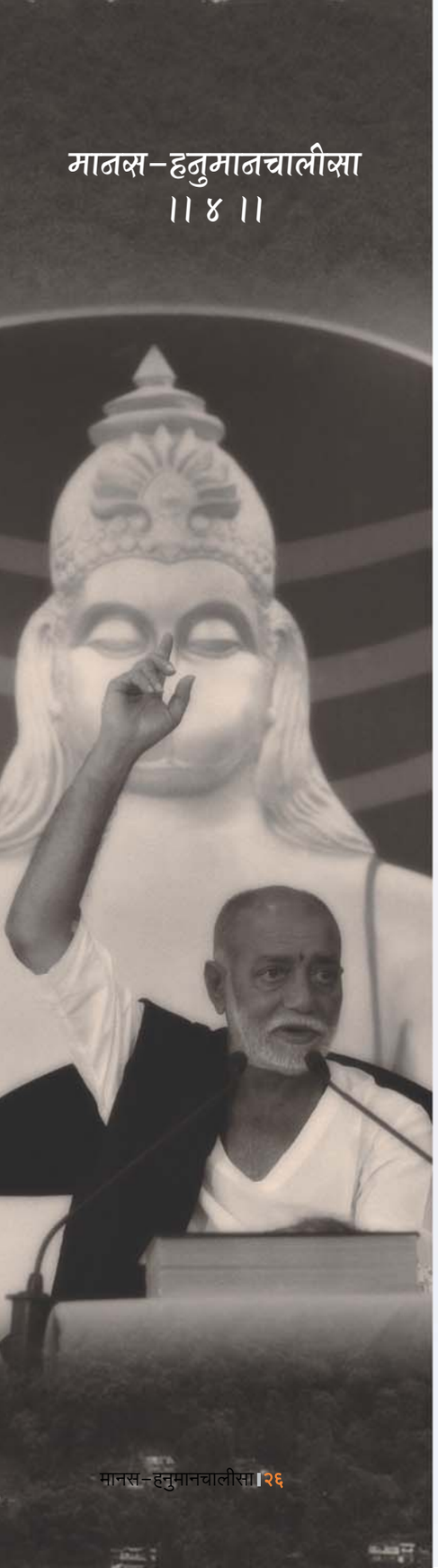

हनुमानजी परम बौद्धिक है, सच्चे मार्गदर्शक है, अच्छे समाजसेवी है

रामकथा की पृष्ठभूमि में 'मानस-हनुमानचालीसा' का कुछ सात्त्विक-तात्त्विक विवरण संवाद के रूप में हम और आप कर रहे हैं। आध्यात्मिक संकट, आधिभौतिक संकट, आधिदैविक संकट। आधिभौतिक संकट में बहुत-सी चीज़ समाहित है। देह भी भौतिक है। आधिदैविक संकट एक अर्थ में कहा जाता है भूकंप, सुनामी, अकल्प्य हादसा, कोई न कोई जल-प्रलय, अचानक आई बाढ़ें, बेईमानी से कर दिया गया किसी शरारतीओं के द्वारा हमला। कुछ दैव परिबलों के कारण, कुछ संकट आते हैं, उसकी श्रेणी ये बताई गई। ये सब तो हम समझ सकते हैं, लेकिन हमारे मन में समझना मुश्किल हो सकता है कि आध्यात्मिक भी संकट है?

बेड़ी लोहे की हो, सोने की हो, क्या फ़र्क पड़ता है? बंधन तत्त्वतः बंधन है। जैसे मैंने कहा था वो स्थूल बात थी, लेकिन विश्ववंद्य गांधीबापू ने कहा था कि, रेंटिये की आसक्ति भी क्यों? महर्षि रमण कहा करते हैं कि एक स्थिति ऐसी आ जाय जिसको बुद्ध ने निर्वाण कहा; जगद्गुरु शंकर ने, भगवान आचार्य शंकर ने मोक्ष कहा; भारतीय वैदिक वाङ्मय ने 'निर्वाण', 'मोक्ष' दोनों शब्द प्रयोग किये। इन्सान का सभी तंतुओं से छुटकारा। कुछ कहा करते थे कि मैं इस तरह निर्बंध हो चूका हूं। यदि मुझे शरीर में रहना है तो मुझे जान बुझकर इस आसक्ति को पकड़ रखनी पड़ेगी, वर्ना मैं नहीं रह पाउंगा। जैसे कोई कुर्ता लटकाने के लिए कोई एकाद खींटी चाहिए। पुराने घर बनते थे सौराष्ट्र में तभी ये रिवाज था। खींटियां सही जगह लगाई जाती थी। कई महापुरुष आपको रजोगुणी लगेंगे, लेकिन वस्त्र को पकड़ रखते थे, बिलकुल निर्बंध न हो जाय। क्योंकि सबको ड्यूटि सौंपी गई है। निवृत्तिकाल के पहले यहां से संतों को भी निवृत्त होने की मनाई है। वर्ना अध्यात्मजगत को देखते हैं तो पता लगता है कि यहां बुद्धपुरुष को कम नहीं सताया गया! इन महापुरुषों को दैहिक पीड़ाओंने नहीं सताया, इन महापुरुषों को अचानक आई आपत्तियों ने उद्विग्न नहीं किया कभी, इन महापुरुषों को तत्कालीन समाज ने बहुत कष्ट दिया। यद्यपि उसको कष्ट नहीं लगा, पूर्णतः अध्यात्म मारग पर चलनेवाले लोगों को कष्ट क्यों? लेकिन अध्यात्म भी आखिरी सीढ़ी का संकट है।

महापुरुष अपनेआप को ड्यूटी पूरी करने के लिए, कोशिश करते टिके रहते हैं निवृत्ति का काल नहीं आया तब तक। और दूसरी बात, आध्यात्मिक बंधन भी उनको रोके रखते हैं, जाने नहीं देते। क्यों भगवान जगद्गुरु शंकर ने कहा कि अब मेरी सभी इच्छायें खत्म हो गई, अब मैं जाना चाहता हूं। एक गुजराती पंक्ति है -

प्रभु तारी कसोटीनी प्रथा सारी नथी होती।
अने जे होय छे सारा, तेनी दशा सारी नथी होती।
न माझी, न हमसफर, न हक में हवा है,
कश्ती भी है जर्जर, ये कैसा सफर है?

सभी प्रतिकूल परिस्थितियों में इन्सान जीये जा रहे हैं! 'अंगं गलितं पलितं मुंडम्।' ये कैसा सफर है! शुभ-अशुभ दोनों बांधते हैं। शुभ-अशुभ दोनों छुटते नहीं, ऐसा एक तत्त्व है परमतत्त्व। देवर्षि नारद के मुख से 'मानस' में बुलवाया गया -

करम सुभासुभ तुम्हहि न बाधा।

शुभ-अशुभ कर्मों हो या कोई भी हो, हरि, तुम्हें बंधन में नहीं डाल सकते।

तो, मेरे भाई-बहन, आध्यात्मिक संकट इस रूप में बन सकता है। बुद्धपुरुष की आखिरी स्थिति में सब साधन छूट जाते हैं। कुर्ते को लटकाने के लिए खिंटी चाहिए। लोग आलोचना करते हैं इतना पहुंचा हुआ फ़कीर आखिर में लोलुपता नहीं गई! किसी पर प्रमाणपत्र देने से पहले सोचे। साहब, प्रायमरी स्कूल में नापास हुए आदमी को अधिकार नहीं है कि बी.ए. का रिज़ल्ट डिक्लेर करे!

कोई माय का लाल हनुमान को बांध सके? कोई है जो राम को रणांगण में बांध सके? हनुमान को क्या एक मेघनाद बांध सकता है? लेकिन हनुमान को चाहिए था उस समय बंधन कि आगे का अभियान है, उसके लिए बंधन आवश्यक है। ऐसे साधुपुरुष के लिए प्रमाणपत्र तो नहीं देना चाहिए। हमारी औकात नहीं, हम है क्या? अपने को तो खोजो! किसी के प्रति प्रमाणपत्र न देना। ईश्वर ने हमें ये अधिकार नहीं दिया है।

काशी में जब कबीर पर बेबुनियाद आक्षेप लगाये, तो वो भी फ़क्कड़ आदमी था! गंगाजल भरकर बोटल में कबीर बाज़ार में निकले, नाचते-नाचते गंगाजल पी रहे थे! पंडितों कहने लगे, देखो, ये है बड़ा संत, शराबी है, शराब पी रहा है, कबीरा बिगड़ गया! कबीर तो कहते, दूध में छाश गिर जाय तो नासमझ कहते हैं, बिगड़ गया! लेकिन मक्खन होगा, दहीं होगा, नवनीत से घी प्रकट होगा। तो, ये बिगड़ा नहीं है। एक अंधता हम में आई है कि हम इस पहुंचे हुए फ़कीरों को ठीक से देख नहीं पाते। अध्यात्म भी संकट है।

तो, संकट से कौन बचायेगा? हनुमान से भी सरल उपाय 'मानस' में बताया -

जपहिं नामु जन आरत भारी।
मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।
राम नाम कलि अभिमत दाता।
हित परलोक लोक पितु माता।।

हरि नाम। तुलसी का हस्ताक्षर है। आर्तभाव से, भीतरी भाव से उनके नाम का आश्रय करेगा तो, मिटहिं कुसंकट, संकट नहीं, कुसंकट भी नहीं बचेगा। आर्तभाव होना चाहिए। इससे सरल उपाय विश्व में कोई हो नहीं सकता। और आर्तभाव में नाम आप ले न सको तो भी चिंता नहीं, उसको पता लग गया! मैं प्रार्थना करूं, मेरे श्रावक भाई-बहन, भगवान आपको बहुत सुखी रखे, लेकिन अंदर से आर्त रहना। चैतन्य को कोई दुःख नहीं था। फ़कीरी में कौन दुःख? लेकिन नील जगन्नाथपुरी को देखते थे और कृष्ण का नील वर्ण याद आते ही 'मुझे ले ले', सागर में कूद पड़ते थे! साहब, आपने पढ़ा होगा चैतन्य महाप्रभु के अंतिम समय में उनके शिष्य कभी उसको अकेले नहीं छोड़ते थे। साहब, जगन्नाथपुरी के मंदिर के खंभे को कभी इतना कसके आलिंगन देते थे कि

हाथ और अंगूठे के निशान खंभे में लग जाते! ये भावजगत का सत्य है, भौतिक जगत का नहीं।

मैं चित्रकूट की परिक्रमा कई बार कर चूका हूं। कामदगिरि। चित्रकूट एक औषधि है। देखो, एक जगह वहां दिखाई जाती है। ये इतिहास का सत्य हो, ना हो, मुझे कोई लेना-देना नहीं है इससे। एक जगह आती है परिक्रमा में, वहां कहते हैं 'पाहि नाथ कहि पाहि गोसाई।' जिसको पूरा साम्राज्य मिला है वो 'पाहिमाम् पाहिमाम्' करते आते हैं, उस समय भरत कितने आर्त होंगे कि भरत के पैर अंदर पत्थर में ऊतरने लगे! और कहते हैं कि आज भी वहां भरतजी के पद के निशान है। मैं वहां जाता हूं तो मुझे भाव उबड़ता है। मेरे लिए ये मुनाफ़ा, फायदा है। मैं समझता हूं, पैर अंदर ऊतर जाय ये बुद्धि में आनेवाली बात नहीं है। चैतन्य के उंगली-अंगूठे के निशान खंभे में लग जाय! प्यार क्या नहीं कर सकता? करके तो देखो इनसे! भक्ति क्या नहीं कर सकती? नारद ने कहा, जो भक्ति करेगा उनके पितृ उत्सव मनाते हैं, नाचते हैं कि ,हमारे कुल में प्रभु के नाम का प्यासी जागा।

जो आनंद संत-फ़कीर करे, उसमें क्या दुःख? ज्ञानी हो जाओ तो भी आर्त रहो। जिज्ञासु हो जाओ तो भी आर्त रहो। अर्थार्थी हो तो भी आर्त बन जाओ। चार प्रकार के भगत है 'गीता' में - ज्ञानी, अर्थार्थी, जिज्ञासु, आर्त।

आर्तता हमारी संपदा है। पीड़ा ही भक्तों की प्रतिष्ठा है। पीड़ा ही उनका पद है। किस पद पर ये बैठते हैं? पीड़ा के पद पर। पीर ही उनको पीर बनाते हैं। जो कसक है। आर्त बने रहो। पीड़ा हमारी पुंजी है। और ऐसे आर्त को देखकर चैतन्य के प्रति जैसे कई आक्षेप हुए, ठाकुर के प्रति कई आरोपण हुए, ये मत करना। कब तक रागद्वेष में जीओगे?

हरि न होते तो हमारा होता क्या? हरिकथा न होती तो हमारा होता क्या? मैं सोचता हूं मेरे पास 'रामायण' न होती तो मैं करता क्या? तुम प्रसन्नता के धनी हो। तुम प्रसन्नता के मालिक हो। आज सांईराम ने एक कविता दी -

सहजमां जीवजो, हठ थी कदी ईश्वर नथी मळता।
बधीये पार्वतीने कोई दिं शंकर नथी मळता।
सतत चहेरा उपर चहेरा बदलता होय छे लोको,
जे बाहर होय छे एवा घणा अंदर नथी मळता।

नीतिनभाई की भी साधुता पर एक कविता है -

अधराते सूरजनां किरणो रेलाय छे,
एकादा साधुने कारणे.
अंदरना ओरडामां अजवाळुं थाय छे,
एकादा साधुने कारणे.
भवभवनो भार साव ओगळतो जाय छे,
एकादा साधुने कारणे.
टचली आंगळीएथी पर्वत ऊंचकाय छे,
एकादा साधुने कारणे.

साधुडा तो आपणां अजवाळां छे, भाईसा'ब। एटले मीरांए कह्युं छे -

साधु रे पुरुषनो संग,
बेनी मारे भाग्ये रे मळ्यो छे,
साधु रे पुरुषनो संग ...

हरिनाम कुसंकट से मुक्त करता है। शर्त नहीं, स्वाभाविक ,आर्तभाव बनाये रखो। तो,

संकट से हनुमान छुडावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।

सबके अपने-अपने संकट होते हैं। सबके अपने-अपने सुख होते हैं। इनमें से हनुमानजी छुड़ायेंगे। शास्त्र प्रमाण, हनुमान राम का नाम ही है। तुलसी -

कालनेमि कलि कपटनिधानू।
नाम सुमति समरथ हनुमानू।।

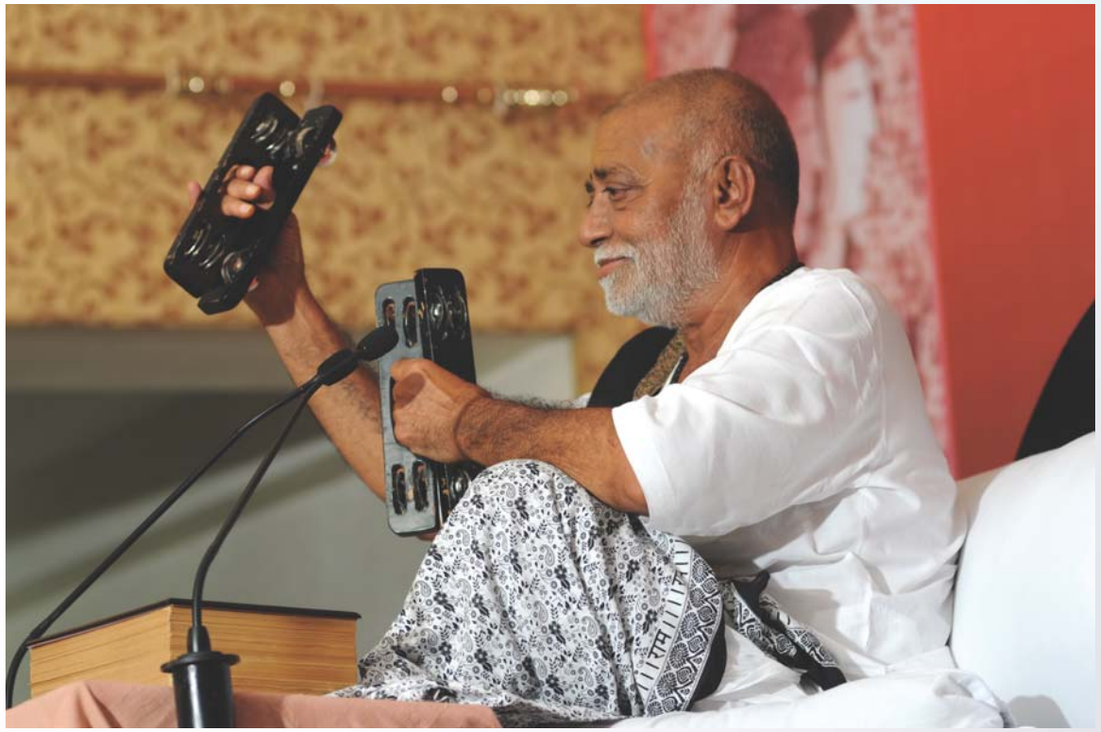

राम लो कि हनुमान लो, पर्याय है। तुलसी कहते हैं, ये कपट निधान कालनेमी नामक राक्षस है और कालनेमी जो हनुमान ने मारा था। तो, कपट निधान कलियुग का कालनेमी है। और प्रभु का नाम हनुमान है। हनुमान जाग्रत रामकथा भी है। हनुमान राम स्वयं है। हनुमान रामनाम है। हनुमान रामकथा स्वयं है।

तो बाप, हनुमान के ग्यारह रूप है। इनमें से किसी भी रूप से हनुमानजी हमें संकटों से मुक्त करते हैं। संकट हरन उनका कार्यक्षेत्र है। तो, ग्यारह रूप से हनुमानजी हमारे लीडर है, हमारे लोकनायक है, ऐसे सर्वलोक महेश्वर है श्रीहनुमानजी महाराज। कई लोकनायक, कई हमारे देवताओं, हमारी श्रद्धा की डगर से दर्शनीय होते हैं, जो दर्शनीय हो। ध्यान देना, उसमें रूप की महिमा नहीं है। लेकिन जिसका आंतर्-बाह्य रूप, बाहर का रूप और भीतर का स्वरूप दर्शनीय हो वो हमें संकट से छुड़ाता है। अब उसको कैसे समझे?

मुख दीखत पातक हरै, परसत कर्म बिलाहिं।
बचन सुनत मन मोहगत, पूरुब भाग मिलाहिं।।

गोस्वामीजी कहते हैं, कई बुद्धपुरुष ऐसे हैं कि वो इतने दर्शनीय होते हैं कि उनके दर्शन करने से हम सभी पातकों से मुक्त हो जाते हैं। केवल दर्शन।

हमारी श्रद्धा के अनुसार कोई सुंदर विग्रह हो, कोई सुंदर मूर्ति हो, उनका दर्शन करते हैं, बहुत हल्के-फूल्के हो जाते हैं। बच्चा संकट में हो, अपनी माँ का मुख देखता है तो बोज़मुक्त हो जाता है। दर्शनीय मतलब खुबसूरत की बात नहीं है। 'दर्शन' शब्द बड़ा है। किसी को देखना और किसी का दर्शन करना, उसमें बहुत अंतर है। जितना दर्शन और प्रदर्शन में है। धर्म में दर्शन हो। शंकराचार्य भगवान को हमने दार्शनिक कहा। बुद्ध के

दर्शन के लिए लोग जाते थे। जगदंबाओं के दर्शन होते। साधुपुरुषों के, बुद्धपुरुषों के, शुद्धपुरुषों के दर्शन होते। कोईभी ऐसा मिल जाय जिसके दर्शन से दुविधा मिटे,तो वो तुम्हारा हनुमान है। क्यों हम मंदिरो में जाते हैं? मैं तो सोमनाथ के खूले शिवलिंग का दर्शन करता हूं तो लगता है मुठ्ठी में चतुर्थ पदार्थ आ गये! द्वारिकाधीश को देखो, क्या सुंदर है द्वारिकाधीश!मुखियाजी नजरुं उतारे!

दर्शन रजोगुणी का न हो, तमोगुणी का न हो, कम से कम सत्त्वगुणी का हो, दर्शन त्रिगुणातीत का हो। कोईऐसा मिल जाय जिसके दर्शन से हमारे पापपुंज खत्म हो। एक दर्शन। मूर्तियां तो एक सिम्बोल के रूप में बैठी है मंदिरों में। हम दर्शन करनेवाली आंखों से देखें तो हमें संकट से थोड़ी राहत मिल जाती है। तो, एक, जो दर्शनीय हो।

दूसरा, जिस रास्ते का ये पथिक हो, उस रास्ते का एक्सपर्ट हो। विज्ञान के एक्सपर्ट के पास गणित लेकर जायेंगे तो दाखले की समस्या नहीं मिटेगी। तुम्हारी समस्या कोई गणित के एक्सपर्ट के पास रखनी होगी। कोई योग में एक्सपर्ट हो, आपको योग सीखना हो तो उसके पास जाना पड़ेगा।जिस रोग के हम मरीज़ है उसके कोई स्पेश्यालिस्ट के पास जाना। दूसरा है, जिस मारग का जो पूरा मर्मी है, उसके पास जाने से संकट हलका होता है।

तीसरा, सब जिसको मानते हो और सबको जो मानता हो। सच्चा अगवानी करनेवाला, सच्चा मार्गदर्शक, उसके दर्शन करनेसे थोड़े संकट कमजोर होते हैं। चौथा, मनुष्यदेह प्राप्त करके जो बौद्धिक भी हो। केवल हार्दिक की बात नहीं। निष्णात है। उससे हमारे संकट कुछ मात्रा में हलके होते हैं। चाणक्य बड़ा बौद्धिक मार्गदर्शक है। उसके मार्गदर्शन ने चाणक्यनीति दी एक नये प्रकार की कि कैसे राजकीय गुंचें मिट ईजाय, उसका मार्गदर्शन दिया।

हनुमान ये सब है। 'बुद्धिमतां वरिष्ठम्।' हनुमानजी परम बौद्धिक है। परमात्मा ने क्षमता दी है और मनुष्यदेह की महिमा को समझकर जो समाजसेवा में ऊतरे, लोगों का काम करने के लिए ऊतरे, आखिरी व्यक्ति का हित करने के लिए जो ऊतरता हो उसको मिलने से संकट की मात्रा कम होती है। हनुमानजी ने समाज की कितनी सेवा की! बौद्धिक भी है, निष्णात भी है, सच्चे मार्गदर्शक है, अच्छे समाजसेवी है हनुमानजी, हर गांव में बैठे हैं। जैसे लोकमान्य तिलक ने महाराष्ट्र में गांव-गांव गणपति की स्थापना करदी, वैसे तुलसीजी ने हर गांव हनुमान की। हनुमान ने सेवा का भेख लिया। सच्चे समाजसेवी के दर्शन से संकट की मात्रा कम हो जाती है।

आगे का सूत्र, सच्चा आध्यात्मिक महापुरुष, पहुंचा हुआ कोई आध्यात्मिक फ़कीर,सूफी हमें संकट से मुक्त कर सकता है। आगे का सूत्र, आंतर्-बाह्य एकरूप। कोई पहचानता नहीं है, किसी को परख नहीं, लेकिन आंतर्-बाह्य एक है ऐसे कोई महापुरुष की मुलाकात हो जाय। दर्शन हो जाय, संकट की मात्रा कम हो सकती है। हनुमानजी ऐसे है। आगे का सूत्र, है जीव लेकिन प्रवृत्ति शिवरूप हो। उनकी समस्त प्रवृत्ति कल्याणकारी हो। वो जो करे,दूसरों के कल्याण के लिए, अपने लिए कुछ नहीं। ऐसे महापुरुष के दर्शन हमारे संकट को कम करते हैं।

आगे का सूत्र, समस्त शास्त्र और समस्त धर्मों का ज्ञान होते हुए सबके बीच में ऐसे रहता है चूप कि लोगों को लगे कि कुछ आता ही नहीं! बोलने का अवसर आयेगा तब बहुत मित बोलेगा, सीमित बोलेगा। ऐसे लोगों के दर्शन, ऐसे वाक् पति,उसके दर्शन हमें संकट से दूर करते हैं।

तो बाप, वेद कहता है, संग चलो और साथ-साथ गाओ।

मिले सूर मेरा तुम्हारा, तो सूर बने हमारा,
सूर की नदियां हर दिशा से बहके सागर में मिले,
बादलों का रूप लेकर बरसे हलके हलके ...

बाप, वक्ता और श्रोता बिलग न हो जाय। एक रहे। ये तो व्यवस्था है कि बोलनेवाला उपर बैठे और श्रोता नीचे बैठे ताकि ठीक से देख सके।शुकदेव,व्यास, वाल्मीकि, शिव ये सब थोड़ा झूको तो पूरा पिलाने को तैयार है।

संगच्छ ध्वंसंवदध्वं संबोध मनासी।

वेदमंत्र और रवीन्द्रनाथ टागोर का कंम्पोझिशन है। संग-संग हो। मेरी व्यासपीठ सबकी व्यासपीठ है। न कोई आश्रमभेद है, न वर्णभेद।

थोड़ा कथा का क्रम ले लूं। वंदनाप्रकरण चल रहा था। हनुमानजी की वंदना के आगे बहुत-सी वंदना की।आखिर में वंदना की गर्भित पंक्ति -

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

तो, सीयाराम की वंदना की। पूरे जगत को सीयाराममय समझकर सीतारामजी की वंदना की। फिर रामनाम महाराज की वंदना की।रामकथा बाद में हुई, नामकथा पहले हुई। जैसे रामकथा वैसे नामकथा। जैसे 'रामचरित मानस' वैसे 'नामचरित मानस'। जैसे 'रामायण' वैसे 'नामायण'।

नौ दोहें में, पूर्णांक में गोस्वामीजी ने हरिनाम की महिमा का अद्भुत वर्णन किया है। परमात्मा के कई नाम है इनमें से तुलसी कहते हैं, रामनाम अग्नि, सूर्य और चंद्र का मूल तत्त्व है। रामनाम अग्नि बनकर पापों को जला देता है। रामनाम चंद्र बनकर हमारे संताप का हरण करके शीतलता प्रदान करता है। रामनाम सूर्य बनकर हमारे तमस् को, हमारी मूढ़ता को, हमारी अज्ञानता को मिटाता है। तो, रामनाम की महिमा गोस्वामीजी ने गाई। भगवान शंकर इस नामजप निरंतर जपते हैं। गणेशजी ने नाम का आश्रय लिया तो जगत में प्रथम पूज्य हुए। नाम की महिमा है। और तुलसीदासजी थक गए। कहदेते हैं -

कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई।
रामु न सकहिं नाम गुन गाई।।

तो, महिमा तो वो जानेगा, जो जपेगा, जो स्वाद लेगा, जो राम के प्रताप को महसूस करेगा।गांधीजी ने कहा, जब-जब मैं संकट में आया, रामनाम ने बहुत काम किया।

रघुपति राघव राजा राम,
पतितपावन सीताराम।
ताळी पाडीने रामनाम बोलजो रे,
एना अंतरना पड दाखोलजो रे.
ताळी पाडीने नरसिंह महेता नागरे रे,
एक हूंडी स्वीकारी कोराकागळे ...

आ गीतोथी माताओए संस्कारनी जाळवणी करी छे.ऐसा हरिनाम का प्रताप है।

मैं चित्रकूट की परिक्रमा कई बार कर चूका हूं। एक जगह आती है परिक्रमा में, वहां कहते हैं कि भरत के पैर अंदर पत्थर में ऊतरने लगे! और कहते हैं कि आज भी वहां भरतजी के पद के निशान है। मैं वहां जाता हूं तो मुझे भाव उबड़ता है। मैं समझता हूं, पैर अंदर ऊतर जाय ये बुद्धि में आनेवाली बात नहीं है। चैतन्य के उंगली-अंगूठे के निशान खंभे में लग जाय! प्यार क्या नहीं कर सकता? भक्ति क्या नहीं कर सकती?

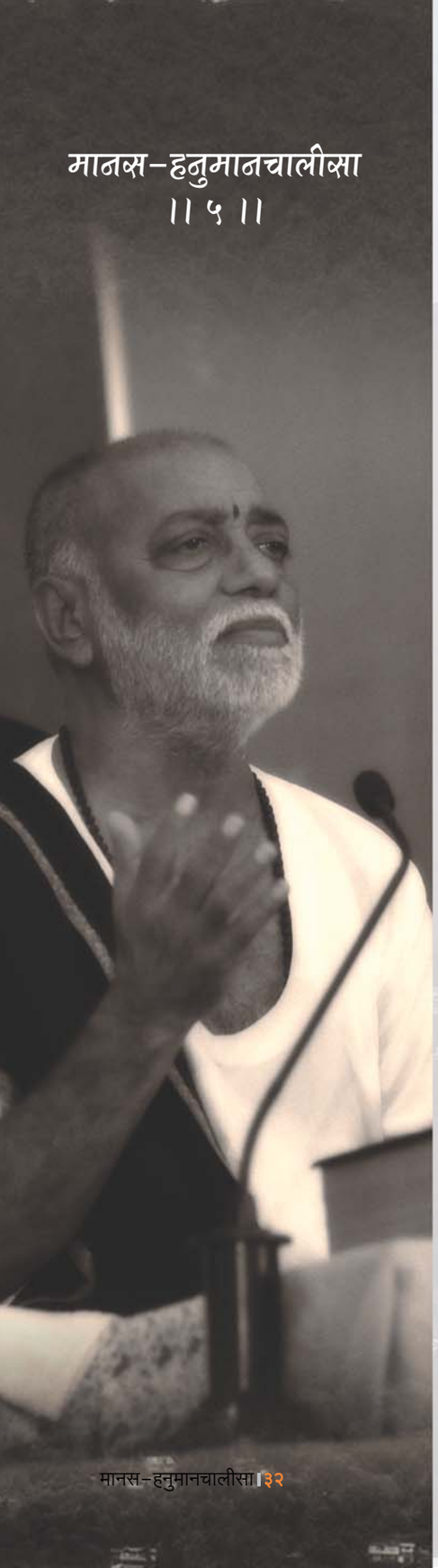

रामकथा इक्कीसवीं सदी में नया मनुष्य पैदा करने की शिबिर है

कथा के केन्द्र-प्रधान विषय 'हनुमानचालीसा' का कुछ ओर दर्शन करें। मेरे पास रोज बहुत-सी प्रश्नावली आती है। कुछ जवाब तो ओलरेडी दे दिये होते हैं। लेकिन उस समय शायद ये जिज्ञासु का थमें न हो, कि सी कारणवश छूट गया हो। और हर प्रश्न का उत्तर मुझे आता हो ऐसा भी आप मत समझक र बैठो। मेरी कुछ सीमा है। मेरे गुरु की कृपा से जरूर मैं बोल लेता हूं, बात ओर है। आप पूरा सुनोगे तो शायद जवाब आ भी जाय। शास्त्र स्वयं जवाब दे देता है।

रामायण सुरतरु की छाया।
भये दूरी निकट जो आया।

'रामचरित मानस' का माहात्म्य कार लिखता है 'रामायण' कल्पतरु की छाया है। जो निकट आता है उसके दुःख दूर हो जाते हैं। मेरा तो पक्का अनुभव है, ये मेरा कल्पतरु है, मेरी कामधेनु है। तुलसी ने भी लिखा है, 'स्यामसुरभि', 'मानस' का ली गाय है, भाव का बछड़ा होना चाहिए जो गाय के थन में मथ मारे। राज कौशिक का शे'र -

मैं समझ आज तक खुद न पाया,
तेरे दरपे सकुँ क्यूं मिलै हैं।

आप भी इस अनुभव से गुजर रहे हैं।

कोई सुरत नहीं बचती पुरानीवाली,
उनकी महफिलमें नये लोग ढालेजाते हैं।

रामकथा क्या है? इक्कीसवीं सदी में नया मनुष्य पैदा करने की शिबिर। तुलसी का शास्त्रसमापन का अंतिम शब्द है 'मानवाः।' पहला शब्दब्रह्म 'वर्ण।' 'वर्णानामर्थसंघानाम्' और 'रामचरित मानस' जहां पूरा होता है वहां 'मानवाः।' तुलसी कहते हैं मेरे शास्त्र का वर्ण ब्राह्मण नहीं है, क्षत्रिय नहीं है, वैश्य नहीं है, शुद्र नहीं है, मेरी रामकथा का वर्ण समग्र विश्व का मानव है। ये मानव को केन्द्र में रखकर गाया गया तुलसी का शास्त्र है। हम रोज नये होते जाते हैं।

'मानस' की मेरी यात्रा में 'लंका कांड' पूरा नहीं हुआ। फिर थोड़े नादुरस्त वयोवृद्ध दादा बीमार हो गये। सिखाई हुई चौपाईयां गाते रहते थे। बीच-बीच में मेरे अध्ययनकाल में मुझे बालक बुद्धि के कारण कभी-कभी कोई प्रश्न उठ ता था, तो मैं पूछ लेता था और जवाब मिलता था तो लगता था ये कोई पूछ ने जैसी बात थी! लेकिन परदा तो गुरु उठाता है। उसके बिना कहां पता लगता है? तो, मैंने कोई प्रश्न नहीं पूछा।

भगवान राम कईबार क्रोधकरते हैं। राम और गुस्सा! लेकिन शंकर इतना सावधान प्रवक्ता है कि उसी समय पार्वती के मन में कोई संदेह का कहीं न बैठ जाय इसलिए वक्ता बड़े चौकन्ने रहकर तुरंत काट देते थे।

जासु कृपाँछु टहिंमद मोहा।
ता कहुँउमा कि सपनेहुँ कोहा।

जिसकी कृपा से मद, मोह, क्रोध छूट जाते हैं ऐसे परम तत्त्व को क्या सपने में भी क्रोध हो सकता है? तुरंत निर्मूल कर देता है। आपको भी कहता हूं कि आपको जहां भी संदेह लगे, तुरंत निर्मूल करो, वर्ना ये पेड़ बनकर तुम्हें और कुल को बरबाद कर देगा! 'संशयात्मा विनश्यति।' और दूसरा, 'बुद्धिनाशा प्रणश्यति।' बुद्धि का नाश, परिणाम विनाश। आत्मा तक संशय पहुंच गया तो बात खतम! संशय उठने मत देना; उठे तो लाख काम छोड़ कर किसी बुद्धपुरुष के पास चले जाना, वहां बिन बोले जवाब मिलता है। वहां मौन काम करता है।

मुझे याद आ रहा है। धमासाण युद्ध में, 'लंका कांड' में पहुंचे थे हम दादा-दीक्षा। दादा बहुत अच्छा गाते थे। सूर तो उनका था! तो, अपनी मौज में रहते थे। ताल-सूर तो ऐसे ही परंपरा में थोड़े रहे। तो, उस दिन मैंने पूछा, 'दादा, भगवान राम क्रोधकरे?' स्वाभाविक है, ये प्रश्न मेरे मन में आया। मैंने ये भी कहा, मैंने आपको भी क्रोधकरते नहीं देखा, तो राम क्रोधकरसकते हैं? ओर सा'ब क्या जवाब दिया, सूनो।

'राम कृपा कर सूत उठावा। इन्द्रजीत और लक्ष्मण के युद्ध का वर्णन है। तीर पर तीर चलाने लगा रावण और भगवान प्रत्युत्तर में काट कसिवारे जा रहे हैं। फिर रावण बहुत गुस्से में आ गया। सो बाण मारे भगवान के रथ के सारथि को। रावण को पता है, राम पर वार करुंगा तो क्रोधनहीं करेंगे। ध्यान देना, ईश्वर को क्रोध आता नहीं, हमको आता है। हमें गुस्सा आ गया, क्रोध आ गया। ईश्वर को क्रोधआता नहीं। मेरा राम समस्त विकारोंसे मुक्त होता है। और भगवान को क्रोधआता है तो हमारे-तुम्हारे जैसे क्रोधनहीं आता। तुलसी के शब्द पर मैं ध्यान आकृष्ट कर रहा हूं -

तब प्रभु परम क्रोधक हुँपावा।

मेरे सारथि पर तुने प्रहार किया! और सारथि रथ से गिर पड़ा। ठाकुर दौड़ पड़े और सारथि को उठाया, तब गोस्वामीजी लिखते हैं। दादाजी का जवाब, भगवान ने क्रोधप्राप्त किया। आया नहीं, पाया।

ये जब रहस्य खुला तो मुझे लगा, ईश्वर को विकार आता नहीं, वे विकार ग्रहण करते हैं, लोकमंगल के लिए। क्रिष्न को रास खेलने की इच्छा हो तो तभी होगी कि उसके पास मन हो। क्रिष्न अमना है। शुक ने कहा, राजन्, क्रिष्न ने गोपियों के साथ रासलीला करने के लिए अपने मन को प्राप्त किया, था नहीं। मन को निमंत्रित किया। क्रोध को प्रभु ने प्राप्त किया। और वो क्रोध सामान्य नहीं, 'परम क्रोधक हुँपावा।' परमतत्त्व का क्रोधपरम होता है।

‘लंकाकांड के युद्ध का वर्णन तो देखो! तब ‘प्रभु परम क्रोध कहुँ पावा।’ प्रभु ने क्रोध को बुलाया, क्रोध को प्राप्त किया। तो, परमात्मा को क्रोध आता नहीं। कुछ लीला के लिए परमात्मा विकार को प्राप्त करते हैं। ये ईश्वर है, समस्त विकारों से मुक्त है। क्रिष्न में झूठ नहीं आ सकता। सत् में असत् नहीं आ सकता। क्रिष्न ने कहा, मैं कभी मिथ्या नहीं बोला हूं। मिथ्या का अर्थ असत्य नहीं, व्यर्थ। कभी व्यर्थ नहीं बोला। ब्रह्मसत्य, जगत मिथ्या। तो, जगत मिथ्या नहीं है, हम जी रहे हैं। आखिर में व्यर्थ है, सारहीन है, सार्थक नहीं है। एक दिन नहीं रहेगा। सपना है। असत्य नहीं है, ये मिथ्या है। सपना है। सपने में जब तक होते हैं, सपने में रस आता है। हर रस आता है। कभी भय, कभी उद्वेग, कभी भयानक, कभी शृंगार, कभी करुणा, कभी हास्य। सभी रस सपनों में आते हैं, लेकिन आखिर में व्यर्थ है। आंख खुली, बेकार! असत्य हो ही नहीं सकता। ये व्यर्थ है। और व्यर्थ वस्तु को हम सार्थक बना सकते हैं। व्यर्थ को भी हम सत्संग करते-करते प्यारा बना सकते हैं। शून्य पालनपुरी का शे’र -

छुं शून्य एन भूल ओ अस्तित्वना प्रभु!

तुं तो हशे के केम, पण हुं तो जरूर छुं.

क्रिष्न कहते हैं, मैं असत्य नहीं बोला हूं, मैं मिथ्या बोला हूं। मिथ्या में भी व्यर्थ बात कही हो तो बताना। उत्तरा के गर्भ को जीवित करना ये तो क्रिष्न ही कर सकते हैं। बार-बार दुहाई देते हैं।

हनुमान क्या है? हमारे शास्त्रों में अर्थों की परंपरा अक्षरार्थ से शुरू होती है; फिर शब्दार्थ होता है; फिर वाक्यार्थ होता है; फिर प्रकरणार्थ होता है। पूरे प्रकरण का सार बताया जाता है। फिर ग्रंथार्थ होता है। पूरे ग्रंथ का छोटे से सूत्र में सार देना। ग्रंथार्थ और बीच-बीच में तत्त्वार्थ, भावार्थ, अन्यार्थ, अन्यन्यार्थ, कितने संदर्भ में आता है। किसी भी वस्तु को जब हम पकड़ न पाये, हमें लगे कि हमारी औकात की बाहर है, हनुमान को समझना। तो, शब्दार्थ करलो, भावार्थ करलो, तत्त्वार्थ करलो और अक्षरार्थ करलो। हनुमान में पहले अक्षर ‘ह’ का अर्थ हकारात्मक सोच। अपने जीवन में पोझिटिव सोच। और फिर हनुमान का चरित्र देखो। इस आदमी समग्र जीवन में हकारात्मक है। हनुमान को समझना है तो ‘ह’ को समझो। तुलसी कहते हैं -

आग्या भंग कबहुन किन्ही।

राम ने जो कहा, हां। युवान भाई-बहन, मेरे प्यारे श्रोता, जिसके प्रति मेरी ममता रही, कथा सुनने के बाद हकारात्मक सोच निर्मित करो, हनुमान मुट्ठी में आने लगेंगे।

दूसरा अक्षर ‘नु’, हमारी बुद्धि में प्रश्न उठेगा कि हर चीज में हां कहना? बुद्धि तर्क करेगी। तो, हनुमानजी का दूसरा अक्षर ‘नु’ हमें ये सिखाता है कि जो वस्तु नुक्सानकर्ता हो उसमें हा मत कहना। बेटा कहेगा, मुझे ये खाना है और डोक्टर ने ये खाने का मना किया हो, तो हां मत करना। प्यार से नुक्सान करनेवाली चीज में हां मत करना। लेकिन पहले पक्का करो कि उसमें हानि होगी। तो ना कहो, बाकी, हां, हां, हां। हम संसारी जीव है, नुक्सानकारक चीज में माँ-बाप, मित्र, गुरुजन, वड़ील, हां न करे। शंकर ने क्या कहा, सती के माता-पिता के घर जाने में आमंत्रण की जरूरत नहीं, आप जाना चाहती है तो मैं हां बोल दूं, लेकिन नुक्सानकर्ता है। और शंकर कौन है? हनुमान। हकारात्मक दृष्टि नुक्सान करे तो उसमें भी हां हां मत करो।

फिर तीसरा अक्षर ‘मा’। ‘मा’ का अर्थ है कि सबको मान दो। हनुमानजी छोटे से छोटे बंदर को इज्जत देते थे। कहां हनुमान कहां छोटे बंदर! सबको मान दो। लोगों को मान देने से अपना बिगड़ेगा क्या? जो सबको आदर दे। सबके प्रति भाव रखो। सब परमात्मा का मंदिर है। इनमें हरि बैठा हुआ है। किसी को धक्का देने से पहले सोचो। तो, ‘मा’ का अर्थ है मानद।

ज्योत से ज्योत जगाते चलो,

प्रेम की गंगा बहाते चलो।

और हनुमान का ‘न’। ‘न’ मानी नम्रता। हकारात्मक सोच, नुक्सानकारक हो, उसमें हां नहीं करना, सबको मान देना और इसका कहीं अहंकार न आ जाय इसलिए आखिरी अक्षरार्थ है नम्रता। ‘पाछे पवन तनय।’ सबसे पीछे रहा। हम और आप ये चार सूत्र यदि अपने जीवन में कोशिश करे, प्रामाणिक प्रयास करे तो हनुमंततत्त्व समझ में आ सकता है।

हनुमान का एक विशेषण है महावीर। हनुमानजी कहते हैं, मैं कपि पवन का बेटा हूं, बंदर हूं, मेरा नाम ‘मारुतसुत मैं कपि हनुमाना।’ लेकिन भरत विरह दशा में एकदम वो डूब न जाय, और भगवान ने खबर देने भेजा है कि हम आ रहे हैं, कह दो। इसलिए उसको धीरे-धीरे कहते हैं, मैं हनुमान हूं। लेकिन हनुमान के कई विशेषण है, इनमें एक -

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।

राम जासु जस आप बखाना।।

तो, यहां हनुमानजी के लिए ’महावीर’ शब्द है। उसकी अर्थसंगति है। समग्र विश्व जिसकी आराधना करता हो वो महावीर। राममंदिर गांव में हो वहां हनुमान होगा, होगा, होगा। हरिभाई कोठारी ने एक बार कहा था। हनुमान का मंदिर हो, तो उसमें रामजी की मूर्ति जरूरी नहीं है, अकेले हनुमान हो सकते हैं; राम की स्थापना न हो, लेकिन राम का मंदिर हो, तो हनुमानजी को रखना ही पड़ेगा, रखना ही पड़ेगा।

हनुमानजी की आराधना करने में कोई विधि-विधान की जरूरत नहीं है। सप्ताह में एक बार हनुमान को तेल चढ़ाते हैं। तेल का अर्थ है स्नेह। हनुमानजी को तेल चढ़ाना मतलब अपना स्नेह चढ़ाना। तुलसी ‘विनयपत्रिका’ में कहते हैं, ‘बंदउ राम लखन वैदेही, ये तुलसी के परमसनेही।’ स्नेह चढ़ाया। और सूत्र, धागा चढ़ाते हैं। सूत्र का अर्थ है योगसूत्र, भक्तिसूत्र, सांख्य सूत्र, न्यायसूत्र इनमें से कोई एकाद सूत्र हनुमानजी के चरणों में रखना। गुरु का दिया हुआ कोई सूत्र रख दो। बहुत सस्ती पूजा है हनुमानजी की। तो, महावीर का अर्थ, समस्त लोगों की आराधना का जो केन्द्र हो, वो हनुमान है। जिसकी साधना करने से सिद्धि प्राप्त हो। कौन हनुमान? जिसकी साधना से सिद्धि मिले, शुद्धि मिले। चाहिए शुद्धि। जैसे अष्ट सिद्धि है, जिसका मेरी व्यासपीठ ने अष्ट शुद्धि में परिवर्तन किया है।

हनुमान जैसा पवित्र कौन है? कौन महावीर? कौन हनुमान? जो हमारी सभी कामनायें पूर्ण करे। सद्‌गुरु दो काम करते हैं इस सूत्रानुसार। या तो आश्रित की सभी कामना पूरी कर देते हैं, या सभी कामना नष्ट कर देते हैं। पसंदगी हमें करनी है कि हमारी कामना पूरी हो कि हमारी कामना नष्ट हो।

बलिपूजा चाहत नहीं, चाहत एक प्रीति।

सुमिरत ही मानै भलो, पावन सब रीति।।

सभी की आराधना का केन्द्र बने वो हनुमान। ये ऐसा देव है जो बलिदान नहीं चाहता। इतनी साल पहले ये तुलसी का क्रांतिकारी सूत्र, बलिपूजा बंद होनी चाहिए। सत्संग में दिनमान बदल जाते हैं। लाख मेहनत करते-करते जो चाहो नहीं मिलता, लेकिन सत्संग में दिन बदलता है, गहन काली रात में सूरज निकलता है।

तो, अभी भी कोईऐसे स्थान हैं जहां लोग पशु कोसाथ लेते जाते हैं और फें कदेते हैं! हम प्रतिवर्ष एक वैदिक पौराणिक यज्ञ करवाते हैं, यज्ञ परंपरा रहे इसलिए, बाकी,कोईहेतु नहीं है, लेकिनवैदिक परंपरा बच जाय। बलि तो सवाल ही नहीं। ये प्रश्न ही नहीं उठ तालेकिन मैंने कहा, आप जो फलकाट तेहो, प्रतीक के रूपमें कोळुंकापेउसमें लाल रंग गुलाल डालके कापेमानो किसीकासर कट तहो! मैंने वो भी मना करदिया। प्रतीक के रूपमें भी मत काटो।और हमारे सब आचार्य इतने सरल, तो मेरी बात मान लते हैं।

मेरा हनुमान बलि पूजना नहीं चाहता। हनुमान दो प्रकारकीबलि चाहता है, अहंकारकीओर ममता की।पशु कोक्यों काटे ।मेरा प्रिय पदो में से प्रिय पद -

हरिने भजतां हजी कोईनीलाज जतां नथी जाणी रे,
जेनी सुरता शामळीयाने साथ वदे वेद वाणी रे।

हरि भजे उसकी लज्जा नहीं जाती। लेकिन शर्त सुरता लगी हो। तो, हनुमंततत्त्व वो है जो बलिपूजा नहीं चाहता। तो क्या चाहता है? 'चाहत एक प्रीति।' तेरा छोटा-साप्यार, तेरी प्रेम भरी निगाहें। तुलसी ने हम जैसों के लिए साधना सरल करदी। जिसकी प्रत्येक पद्धति पवित्र है। सब चेष्टायेंशुभ है।

तो, मेरे श्रावक भाई-बहन, हनुमंततत्त्व पकड़ में न आये तो हनुमानजी के संदर्भ में, पृष्ठ भूमि में कभी 'विनय', कभी 'मानस', कभी कुछ अर्थदर्शन करे। सार्थक दर्शन करे।तो, ऐसा हनुमान, उसकाचालीसा -

संकटसे हनुमान छुडावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के काजसकल तुम साजा।।

तो, वो हनुमान संकटसे छुडातेहैं। सबके उपर वो है प्रभु, प्रभु सबके हैं। और सबके उपर होते ही सबसे परा। राम सबसे पर, असंग, जलकमलवत्। और कैसा राजा? तपस्वी राजा। इक्कीसवींसदी में दुनिया चाहती है कोईतपस्वी राजा मिले। नेपोलियन ने पांच लाख को मरवा दिये, सिर्फ तीस हजार बचे! ये सब मनस्वी राजा है। राम कैसाहै? सबके उपर उनकीकृपाहै। और सबसे परा है और तपस्वी राजा है। ऐसे तपस्वी राजा के सब कम हे हनुमान, तुने सजा दिये। रामचंद्र के सभी कार्य आपने संवारा, सजाया, संपन्न किया।

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के काजसकल तुम साजा।।

भीम रूपधरि असुर सँहारे।
रामचंद्र के काजसँवारे।।

विद्यावान गुनि अति चातुर।
राम काजक रिबेकोआतुर।।

तो, तीन बार आया कि रामकाजक रनेमें संपन्नता।

रामकथाके क्रम में, 'बालकांड' में याज्ञवल्क्य भरद्वाज के सामने कथाकरतेहैं। फिरशंकरके ब्याह की कथासुनाते हैं और सती पार्वती हुई और ब्याहने के बाद एक बार कैलासमें पार्वती कीजिज्ञासा पर महादेव ने कथाकाआरंभ किया।भवानी ने रामकथाकीजिज्ञासा की,शिवजी ने धन्यवाद दिया। कथामें पहले निशिचर वंश की कथा लिखी। फिर सूर्यवंश की कथा लिखी। रावण के जन्म-कर्म कीचर्चा कीशिवजी ने। गोस्वामीजी कहते हैं, रावण के समय में हमारा पूरा देश-समाज भ्रष्टाचारसे भर गया। पृथ्वी अकुलागई। गाय कारूप धारण करके ऋषिमुनियों के पास गई। सब मिलकर देवताओं के पास गए। फिरब्रह्माजी के पास सब गये।

ब्रह्मा ने कहा,जिसने हमें बनाया उस परमतत्त्व कीहम प्रार्थना करें। सबने मिलकर परमात्मा कीस्तुति की। सबकी प्रार्थना स्वीकार हुई। आकाशवाणी से जवाब आया। मैं धरती पर अयोध्या में प्रगट हूंगा। सब आनंदित हो गये।

अब तुलसीजी हमें अयोध्या ले चलते हैं। अयोध्या का साम्राज्य वर्तमान रघुकुलपति महाराज दशरथजी काशासन है, जिसमें ज्ञानयोग, भक्ति योगऔर कर्मयोग कात्रिवेणीसंगम है। राजा कोकौशल्या आदि रानियां है। पवित्र आचरण में जीती है। राजा रानी को प्यार करताहै। रानियां राजा कोआदर देती है। दशरथजी कोएक दुःख है कि पुत्र नहीं है। चिंता हुई। दशरथजी गुरुद्वार समिध के साथ गए। अपना दुःख-सुख सुनाया। वशिष्ठ जीने कहा,मैं कबसे प्रतीक्षा में था। राजन्, एक नहीं, चार पुत्रों के पिता होंगे। पुत्रकामेष्टि यज्ञ करो। शृंगि आये। पुत्रकामेष्टि यज्ञ स्नेहयुक्त आहुति से हुआ। आखिरी आहुति में यज्ञ नारायण प्रगट हुए। वशिष्ठ जीको प्रसाद देकर कहाकि ,राजा कोकहो, रानियों में यथा योग्य प्रसाद बांट दे। यज्ञदेव अग्नि के रूपमें अदृश्य हुए। दशरथजी ने अपनी रानियों कोयथाजोग प्रसाद बांटा। प्रसाद के प्रताप से तीनों रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करती है। पंचाग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत्रमास, नौमी तिथि, भौमवासर, मध्याह्न कासूरज।

हरि आनेवाला हैं। जड़-चेतन हर्षित हैं। पूरा जगत जिसमें निवासित है ऐसा परब्रह्म, परमात्मा, ब्रह्म, भगवान, जो कहनाचाहे वो कौशल्यामाँ के भवन में प्रगटे,उजाला होने लगा। बिलकुल मध्याह्न कासमय होते ही प्रभु प्रगटे। तुलसी ने पहले चतुर्भुज की झांखी कराई-

भए प्रगट कृपालादीनदयाला कौसल्याहितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूपबिचारी।।

कृपालु प्रगट भए। माँ कोज्ञान हुआ। मैं क्यों आया हूं, सब कथाभगवान कहनेलगे। संतों से सुना है मैंने कि ,माँ ने मुंह फेरलिया। आप आये, स्वागत, आप नारायण बनकर आये! लेकिन फिर माँ ने ब्रह्म को बालक बनाया। धन्य है भारत कीनारी! प्रभु नवजात शिशु कीतरह हो गए और रोने लगे। शिशुरुदन सुनकर सब रानियां भ्रम के साथ दौड़ आई। माँ कौशल्याके अंक में अनंत कोटिब्रह्मांड के नायक बालक बनकर रो रहा है। दासियों कोपता लगा। दौड़ी,दशरथजी के दरबार में जाकर कहा,'महाराज, बधाई हो! कौशल्यामाँ कीकुख से लाला भयो है।' दशरथजी पुत्रजन्म की बात सुनते ब्रह्मानंद में डूबगये। वशिष्ठ जीआये और कहा,'राजन्, तुम्हारे घर परमानंद प्रकटहुआ है, परमतत्त्व आया है।' पूरी अयोध्या में रामजन्म काउत्सव शुरू हुआ।

'हनुमान' में पहले अक्षर 'ह' काअर्थ हकारात्मक सोच। दूसरा अक्षर 'नु' हमें ये सिखाता है कि जो वस्तु नुक्सानकर्ता हो उसमें हा मत कहना। हकारात्मक दृष्टि नुक्सान करेतो उसमें भी हां हां मत करो।तीसरा अक्षर 'मा'। 'मा' काअर्थ है कि सबकोमान दो। हनुमानजी छोटेसे छोटेबंदर कोइज्जत देते थे। और 'न' मानी नम्रता। कहींअहंकारन आ जाय इसलिए आखिरी अक्षरार्थ है नम्रता। हम और आप ये चार सूत्र समझने कीयदि अपने जीवन में कोशिशकरे, प्रामाणिक प्रयास करेतो हनुमंततत्त्व समझ में आ सकताहै।

कथा-दर्शन

परमतत्त्व को केवल प्रेम प्रिय है।

रामराज्य प्रेमराज्य का पर्याय है।

रामकथा का वर्ण समग्र विश्व का मानव है।

कथा प्रवेश होने का शिविर है।

हरिनाम रामयात्रा का पेट्रोल है।

हनुमान दो प्रकार की बलि चाहते हैं, अहंकार की और ममता की।

सद्गुरु या तो आश्रित की सभी कामना पूरी कर देते हैं, या सभी कामना नष्ट कर देते हैं।

सद्गुरु संसार छोड़ने की सीख न दे।

बुद्धपुरुष की आखिरी स्थिति में सब साधन छूट जाते हैं।

साधु कभी किसी से तकरार नहीं करता, तकदीर से भी नहीं।

हरचीज का स्वीकार कर ले वो साधु।

पीड़ा ही भक्तों की प्रतिष्ठा है, पीड़ा ही उनका पद है।

मालिक की आज्ञा समान कोई सेवा नहीं है।

रोज भीतर का स्नान जरूरी है।

स्वल्प धर्म आदमी को तार देता है।

परिस्थिति आदमी से भूल करवा देती है, उसको पापी मत कहो।

अतिशय सुख आदमी को वासनाग्रस्त कर देता है।

संतोष के बिना कामना का अंत नहीं।

झूठ की भीड़ होती है, सत्य एकांतिक होता है।

अनुभव और अनुभूति में अंतर है।

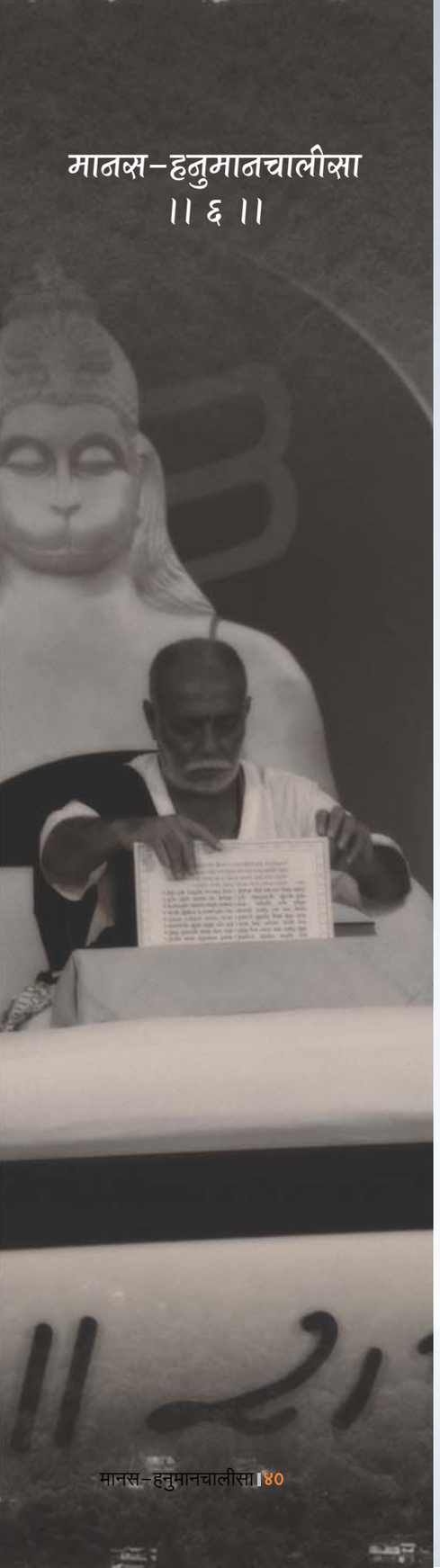

मानस-हनुमानचालीसा
।। ६ ।।

परम औदार्य तपस्वी राजा का प्रथम लक्षण है

'मानस-हनुमानचालीसा' को केन्द्र में रखकर जो सहज संवाद हो रहा है, उसमें हम आगे बढ़ें। स्वामी शरणानंदजी महाराज ने कहा कि ईश्वर की उपासना आप कामना से करोगे तो तुम ईश्वर को मनुष्य बना देते हो। मेरे बेटे को जोब मिल जाय, बेटी की शादी हो जाय ये सब मनुष्यसृष्टि का कारोबार है, इसमें परमात्मा को न डालो। ईश्वर के पास जब मानसिक कामनाओं को लेकर ईश्वर का भजन किया जाता है, तो ईश्वर मनुष्य बन जाता है, लेकिन मनुष्य को तुम निष्काम भाव से भजो तो ये मनुष्य ईश्वर बन जाता है। ये बात बिलकुल पक्की है। कम से कम सत्संग में मन बढ़ाये।

आप तो मेरे श्रोता है। आप न हो तो मैं गाउं कहां? वैसे तो मैं वृक्षों के सामने गाने का आदि हूं। मैं बबूल के सामने गाता था। मैं रेल्वे लाईन पर अकेला घूमता था। और बबूल के वृक्षों को सुनाता था। गाता था मानो प्रवचन करता था। कोई देखे तो लगे कि पागल हो गया है! और उस समय मेरी छोटी उम्र में मैं हिन्दी में बोलता था। ये मेरा सहज क्रम था। बाप, 'विष्णुसहस्रनाम' में भगवान का एक नाम है 'व्यवसायो व्यवस्थान:।' आप सब व्यवसाय में है। बिलग-बिलग धंधे में है, उद्योगो में है। क्योंकि जीवन का गुजारा करना है, इनमें से शेष निकालकर परमार्थ करना। सब अच्छे भाव से लगे हैं। तो, कोई ये मत सोचना कि हम व्यवसाय कर रहे हैं। हम कब आध्यात्मिक होंगे? 'विष्णुसहस्रनाम' आपको कहता है, व्यवसाय मेरा नाम है। इससे सरल चीज़ कौन हो सकती है? तुम जब व्यवसाय करते हो तब तुम मेरा नामजप कर रहे हो। अब इससे भजन की सरल सुविधा विश्व में किसी ने दी है?

'भगवद्गीता' में भी कृष्ण कहते हैं कि अर्जुन, किसी का भी दुनिया में व्यवसाय जो हो, वो व्यवसाय मैं हूं। 'व्यवसायोस्मि।' मैं व्यवसाय हूं। व्यवसाय मेरी विभूति है। लोभ के कारण नीति बारबार बदलो नहीं। व्यवसाय ही परमात्मा है, तो हम ईमानदारी से वर्ते, हम सावधानी से वर्तें। तो, इसी मनोदशा सत्संग से प्राप्त करके फिर आप कीर्तन न करो तो भी कीर्तन है।

मेरा पासपोर्ट पहली बार बनाना था। तो पूछा, तुम्हारा धंधा क्या है? मेरा धंधा धर्मगुरु का है ऐसा मुझे लिखवाना नहीं था। विदेश न जाना मिले तो कोई बात नहीं, मैं प्रिस्ट हूं नहीं। तो, मैं कैसे लिखूं? मैं संगीतकार नहीं, गायक नहीं, मैं लिखाउं तो क्या? 'कथा' में वो समझते नहीं! तो, मैंने कहा, धंधा में 'भजन' लिखो। लिखा साहब, और पासपोर्ट हो गया!

हम अपनेआप बहुत धर्मांतर कर रहे हैं। जिसको 'भगवद्गीता' ने कहा है व्यभिचारिणी बुद्धि। बुद्धि शतरूपा है 'मानस' में। बुद्धि मिन्स शतरूपा, जिसके सो रूप है। एक होती है बुद्धि। एक होती है प्रबुद्धि। एक होती है विशुद्ध बुद्धि। एक होती है मंद बुद्धि। एक होती है व्यवहार बुद्धि। एक होती है परमार्थ बुद्धि। हमारी बुद्धियों के कितने रूप हैं! बुद्धि सब में होती है। पशु में भी होती है। लेकिन पशुओं की बुद्धि आहार, निद्रा, भय, मैथुन में, जैसे समय पर आहार, समय पर सोना, कोई बड़ा प्राणी आया तो भय और उसकी पशुवृत्ति की गति में है। वो इसके ज्यादा सोचती नहीं। लेकिन प्रबुद्धि वो है कि खाना-पिना ठीक से, रहना अच्छे ढंग से, समाज के साथ रहना और इसका ये लाभ ले सकती है। विज्ञान का लाभ ले सकती है ये प्रबुद्धि है। एक होती है विशुद्ध बुद्धि। विशुद्ध बुद्धि का मतलब है कि जिस बुद्धि में किसी के प्रति कोई दुर्भाव प्रकट न होता हो। ये विशुद्ध बुद्धि है। मुश्किल है। एक बुद्धि के लिए 'मानस' में 'मंदबुद्धि' शब्द आया है। मेरा अहित हो तो हो, दूसरों का होना ही चाहिए! लेकिन इनमें भी महा मंदबुद्धि का बिरुद भी 'मानस' में है। तुलसीदासजी अपने ऊपर लेते हैं -

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

एक बुद्धि होती है, स्वार्थबुद्धि। वो अपना ही देखती है। स्वार्थी लोगों के कुछ लक्षण समझिए। स्वार्थी में लोभ होगा ही। क्रोध कम होगा। स्वार्थी बुद्धि लोभग्रस्त होती है। लोभ को बड़ा दुर्गुण माना गया है। काम दुर्गुण है, लेकिन काम कितना समय टिकता? ये विकार दीर्घजीवी नहीं है। कितने समय में वो आदमी को नीरस छोड़ देता है! और क्रोध भी हम निरंतर नहीं कर पाते। करते हैं हम क्रोध, फिर ऊतर जाता है। चौबीस घंटे कोई क्रोध कर ही नहीं सकते। ओशो कहा करते थे, चौबीस घंटे क्रोध में रहना ये तुम्हारा स्वभाव नहीं है। चौबीस घंटे शांत रहना ये तुम्हारा जन्मजात स्वभाव है। और 'मानस' का क्रोध के बारे में बड़ा प्यारा सूत्र है। जब हमारे सामने कोई दूसरी घटना, दूसरा आता है तब क्रोध उत्पन्न होता है। द्वैत के बिना क्रोध नहीं हो सकता। वेदांतियों के अद्वैत में क्रोध आ ही नहीं सकता।

क्रोध कि द्वैत बिद्धि बिनु।

लेकिन लोभ को गोस्वामीजी ने 'अपार' कहा। कभी ऐसा हुआ कि लोभ इतना समय ही करना! ऐसा नहीं होता है। गोस्वामीजी कहते हैं -

काम बात कफ लोभ अपारा।
क्रोध पित्त नित छाती जारा।।

कल रात को पूछा गया था कि, ''बापू, संतोष कैसे आये?'' हमारी कामना पूरी हो जाय फिर हमें संतोष आ जायेगा, ऐसी धारणा में प्लीज़ कभी मत रहना। कामना पूरी होते ही एक नई कामना पैदा हो ही जाती है। संतोष आ जाय तो कामना मिट जाय। भोजन करते जब डकार आता है, फिर वो ही भोजन जिसके लिए तुम जल्दी कर रहे थे, वो ही चीज़ की कामना समाप्त हो

जाती है, लेकिनवो क्षणभंगुर है। तीन-चार घंटे में फिर भूख लगती है। ये चलता है। लेकिनये मिशाल है, दृष्टांत है। संतोष के बिना कामना का अंत नहीं। हमारे यहां वैराग की परिभाषा करतेहुए 'मानस' में लिखा है -

रमा बिलासु राम अनुरागी।

राम अनुरागी को संसार के वैभव-विलास कैसे हो जाते हैं? -

तजत बमन जिमि जन बड़ भागी।

खाते समय ये जितना प्यार कर रहा था दूधपाक को, वो ही दूधपाक का अतिरेक होता है और वमन हो जाता है! तो, वो ही अपने ही पेट से निकला दूधपाक अपने को अच्छा नहीं लगता है, ऐसे छूटता है वमन। संसार छोड़ने की जरूरत नहीं है। सद्गुरु कौन? जो संसार ना छुड़ावे। सद्गुरु संसार छोड़ने की सीख न दे। तो, लोभ और स्वार्थ बुद्धि जो है, एक प्रकार की बुद्धि है। एक पारमार्थिक बुद्धि है। 'मानस' में तो बड़ी प्यारी पंक्ति है -

जहां सुमति तहं संपति नाना।
जहां कुमति तहं बिपति निदाना।

हनुमानजी एक ऐसा तत्त्व है जो 'बुद्धिमतां वरिष्ठम्।' समस्त बुद्धियों का शिरमोर तत्त्व है। प्रज्ञावान है। तो, व्यवसाय को भी हरिनाम समझकर मौका मिले हरिनाम लो, थोड़ा व्यवसाय में विश्राम भी मिले। तो, निष्काम भाव से हरिस्मृति करो।भीतरी संपदा बढ़ाओ।

तो, मेरे भाई-बहन, रोज भीतर का स्नान जरूरीहै। लेकिनइन भीतरी स्नान के लिए कुछचेतना से भरे शब्द मददगार हो सकतेहैं। कुछ ऐसे उपकरण है प्रेम मारग के जो साथ देते हैं। तो बाप, 'मानस-हनुमानचालीसा', उसकी पंक्ति जो हम लिये जा रहे हैं -

सब पर राम तपस्वी राजा।
तीन के काज सकल तुम साजा।।

गोस्वामीजी कहते हैं, राम सबसे उपर है। हम सब उनकीछाया में है। उनके आध्यात्मिक गिरिराज की छायामें हम पले जा रहे हैं। और फिर भी, ये होते हुए भी ये राम सबसे पर है। और तपस्वी राजा ऐसा ही होना चाहिए। सबके समान लगे, सबके साथ चले, सब को लगे ये हमारा आधार है। है सब उनका, लेकिनये सब से पर रहे।

राज्य के बहुधा सात अंग बताये गये। सात अंग लें तो, एक तो राजा होना चाहिए। दूसरा, मुल्क, देश होना चाहिए, राष्ट्र होना चाहिए। तीसरा, अमात्य होना चाहिए। अमात्य मानी मंत्री, सलाहकार होना चाहिए। राजा को अच्छे मित्र होने चाहिए। अच्छी सलाह देनेवाले शुभचिंतक राजा के होने चाहिए ये चौथा अंग। पांचवां, दुर्ग होना चाहिए; किल्ला, सुरक्षा होनी चाहिए। छठा, सेना होनी चाहिए, लश्कर होना चाहिए और सातवां, कोष होना चाहिए, खजाना होना चाहिए। कहींछ की बात है। बिलग-बिलग अंक मिलते हैं।

तपस्वी राजा के लिए सचिव कौन? तपस्वी राजा का प्रदेश कौन? तपस्वी राजा की रानियां कौन? तपस्वी राजा की सेना कौन? तो, उसका जिक्र 'मानस' में एक आध्यात्मिक तरीके से दिया। चित्रकूट की यात्रा होती है और जब चित्रकूट का दर्शन होता है तब गोस्वामीजी यहां एक तपस्वी राजा का रूपकप्रकट करते हैं। राम तपस्वी राजा है और राम के लिए एक राजा के भौतिक लक्षण है, वो तो है ही, लेकिन जब राम को तपस्वी राजा कहा,तब कुछलक्षण बदल जाते हैं।

सचिव बिरागु बिबेकु नरेसू।
बिपिन सुहावन पावन देसू।।
भट जम नियम सैल रजधानी।
सांति सुमति सुचि सुंदर रानी।।

तपस्वी राजा के लिए चित्रकूट को रूपक बनाकरबताया गया कि तपस्वी राजा का मंत्री, सचिव अथवा अमात्य कौनहै? वैराग्य ही उसका प्रधानमंत्री है। अपनी जनता के लिए, अपनी प्रजा के लिए लोकमंगल के लिए तपस्वी राजा जो भी छोड़ना पड़े,सब कुछछोड़ दे ऐसा वैरागी होना चाहिए। एक क्षण में भरत को राज्य मिले, इस वाक्य पर भगवान राम ने अयोध्या का

सार्वभौम साम्राज्य त्याग करदिया, ये वैराग।

तपस्वी राजा का सम्राट कौन? सम्राट विवेक। विवेक राजा है। भगवान राम का विवेक तो देखो! कितना विवेक!

सुनु जननी सोइ सुत बड़ भागी।
जो पितु मातु बचन अनुरागी।।

ये भगवान का विवेक देखिये, 'हे माँ, ये बेटा बड़ भागी है, जो माता-पिता के वचन का अनुरागी है। आपके और मेरे पिताजी के वचन अनुराग से निभाना ये मेरा पुत्रत्व है। मैं बड़ भागी हूं।' माँ किसी को भी आप कह सकते हो, लेकिन जनेता नहीं कह सकते। जनेता तो जिन्हों ने आपको जन्म दिया वो ही है, वो ही जननी है। तुलसी की कुछ पंक्तियां मेरी समझ में, मेरे गुरु की कृपा से, सीधी-सादी नहीं है। कहीं-कहीं पंक्तियों में ध्वन्यात्मक संदेश है।

तो, शब्द का उपासक कौन? शब्द कहां उपयोग करना ये जानता है। 'माँ' आप सबको कह सकते, लेकिन 'जनेता' नहीं कह सकते। जनम दे सो जनेता। यहीं राम कैकेयी के सामने 'जननी' शब्द का प्रयोग करते हैं। क्या कैकेयी राम की जननी है? राम की जननी कौशल्या है। ये कैकेयी को माँ जरूर कह सकते हैं, लेकिन सोच समझ करके शब्द का प्रयोग किया है -

सुनु जननी सोई सुत बड़ भागी।
जो पितु मातु बचन अनुरागी।।

हे जन्मदात्री, वो ही बेटा है, जो माता-पिता के वचन का अनुरागी हो। फिर -

तनय मातु पितु तोषनिहारा।
दुर्लभ जननि सकल संसारा।।

हे जनेता, बेटा तो माँ-बाप को पूर्ण संतोष दे, वो ही पुत्र है ऐसा बेटा हे जननी, संसार में दुर्लभ है। दो बार 'जननी।' तीसरी बार -

मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हित मोर।
तेहि महँ पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर।।

मैं वन जाउंगा तो क्या-क्या होगा? एक तो मुनिजनमिलन, साधुसंग होगा। विशेष रूप में तपस्वी राजा रहूंगा। सब प्रकार से मेरा कल्याण होगा। मेरे पिता की आज्ञा मैंने मानी ऐसी एक तसल्ली रही। उपरांत हे जननी, जिसमें तेरी संमति है ऐसी आज्ञा का मैं अनुसरण कर रहा हूं। तो, तीन बार 'जननी' क्यों? राम की जननी कौशल्या है। लेकिन यहां अर्थ है कि यशस्वी राम अथवा तो राजा राम की जननी कौशल्या है, लेकिन तपस्वी राम की जनेता कैकेयी माँ तू है। तू वन न भेजती तो विश्व को तपस्वी राजा न मिलता। कितनी सावधानी से शब्द का सदुपयोग हुआ!

बिपिन सुहावन पावन देसू।

चित्रकूट के अगल-बगल का जो विस्तार है वो उनका देश है। ये मेरा प्रदेश है। राम ने जीवन में सोचा था कि सीधा गादी पर बैठ नेसे रघुका राज्य होगा, सूर्यवंशीओं का राज्य होगा, प्रेमराज्य नहीं होगा। प्रेमराज्य होगा तपस्वी राजा का एक नया पद निर्मित करनेसे।

हमारे 'रामायण' के विचारवान महापुरुष तो कहते हैं, रामराज्य यानी प्रेमराज्य का प्रारंभ अयोध्या में हुआ ही नहीं। अयोध्या में तो केवल चौदह साल के बाद तिलक किया। ये सब औपचारिकता थी, रामराज्य का आरंभ शृंगबेरपुर में गंगा के तट पर जब केवट से पास भगवान ने मांगा, पूरा विश्व जब ईश्वर के पास मांगता था, वो परमात्मा केवट से गंगापार होने के लिए भीख मांग रहे हैं, वहां रामराज्य की नींव डाली गई थी। तपस्वी राजा।

'रामचरित मानस' की पृष्ठ भूमि में तपस्वी राजा के पांच लक्षण है। सभी राजा उदार नहीं होते। कई राजा बिलकुल कृपण, बिलकुल कंजूस, प्रजा को चूसनेवाले इतिहास में निकले हैं। तपस्वी उदार होना चाहिए। तपस्वी राजा इससे भी अधिक उदार होना चाहिए। भगवान राम तपस्वी राजा है, क्योंकि उदार है, परम उदार है। 'मानस' में, मेरी दृष्टि में तपस्वी राजा का एक लक्षण औदार्य, परम औदार्य। दूसरा लक्षण, तपस्वी राजा को विरोधीओं के प्रति दिल में कटुता नहीं। सामान्य राजा के ये लक्षण नहीं है। सामान्य राजा के लक्षण है कि दुश्मन के साथ दुश्मन भाव रखो, प्रजा के कल्याण के लिए। दुश्मन का दुश्मन मित्र मानो, ये पूरी राजनीति है।

गोस्वामीजी कहते हैं कि राम का स्वभाव दुश्मन को भी अनुकूल पड़ता है। वैरी भी जिसकी बड़ाई करे ये तपस्वी राजा का लक्षण है। तपस्वी राजा का तीसरा लक्षण है, सबको प्रेम करे। और सबको लगे कि मुझको जितना प्रेम कर रहा है मेरा राजा, इतना दूसरों से नहीं कर रहा है। ऐसा सबको अनुभव हो, फिर भी आखिरी व्यक्ति होती है उसका विशेष लगाव हो जाता है। इसलिए तुलसी को ये प्यारी पंक्ति लिखनी पड़ी -

राम हि केवल प्रेमु पिआरा।
जानि लेउ जो जाननिहारा।।

परमतत्त्व को केवल प्रेम प्रिय है। रघुवंशी राम पदयात्रा करते हैं। अहल्या का स्वीकार ये तपस्वी राम का लक्षण है। परमात्मा ये काम करते हैं, बड़ों की अहंता तोड़ते हैं और छोटे की लघुता तोड़ते हैं। 'बेद बचन मुनि अगम।' वेद को अगम, मुनियों को अगम ऐसे लोगों के साथ प्रभु बालक और बाप करे ऐसे बात करे, ये राम का अंतिम व्यक्ति के साथ आत्मीयता, ये तपस्वी राजा का तीसरा लक्षण है।

पहला लक्षण औदार्य, दूसरा लक्षण दुश्मन को भी जिनकी प्रवृत्ति अनुकूल लगे। तीसरा, आखिरी व्यक्ति तक पहुंचने का इरादा। चौथा लक्षण है, लेना और अधिकारी को दे देना। वालि से किष्किन्धा ली, सुग्रीव को दे दी। अपना साम्राज्य नहीं बढ़ाया। लंका ली, विभीषण को दी। ये तपस्वी राजा का लक्षण है। पांचवां और अंतिम तपस्वी राजा का लक्षण है, प्रजा के हर बोल को वेदवचन समझना। आज प्रजा के बोल को सुना नहीं जा रहा है! प्रजा को कहे, भय के बिना आप मुझे रोक लेना, यदि मेरे मुख से अनैतिक बात निकल जाय, जो नियम के विरुद्ध हो। ये तपस्वी राजा का पांचवां लक्षण है। इसलिए तुलसी कहते हैं -

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के काज सकल तुम साजा।।

'रामचरित मानस' की पृष्ठ भूमि में तपस्वी राजा के पांच लक्षण है। तपस्वी राजा का एक लक्षण औदार्य, परम औदार्य। दूसरा लक्षण, तपस्वी राजा को विरोधीओं के प्रति दिल में कटुता नहीं। वैरी भी जिसकी बड़ाई करे ये तपस्वी राजा का लक्षण है। तपस्वी राजा का तीसरा लक्षण है, सबको प्रेम करे; और सबको लगे कि मुझको जितना प्रेम कर रहा है मेरा राजा, इतना दूसरों से नहीं कर रहा है। चौथा लक्षण है, लेना और अधिकारी को दे देना। पांचवां और अंतिम लक्षण है, प्रजा के हर बोल को वेदवचन समझना।

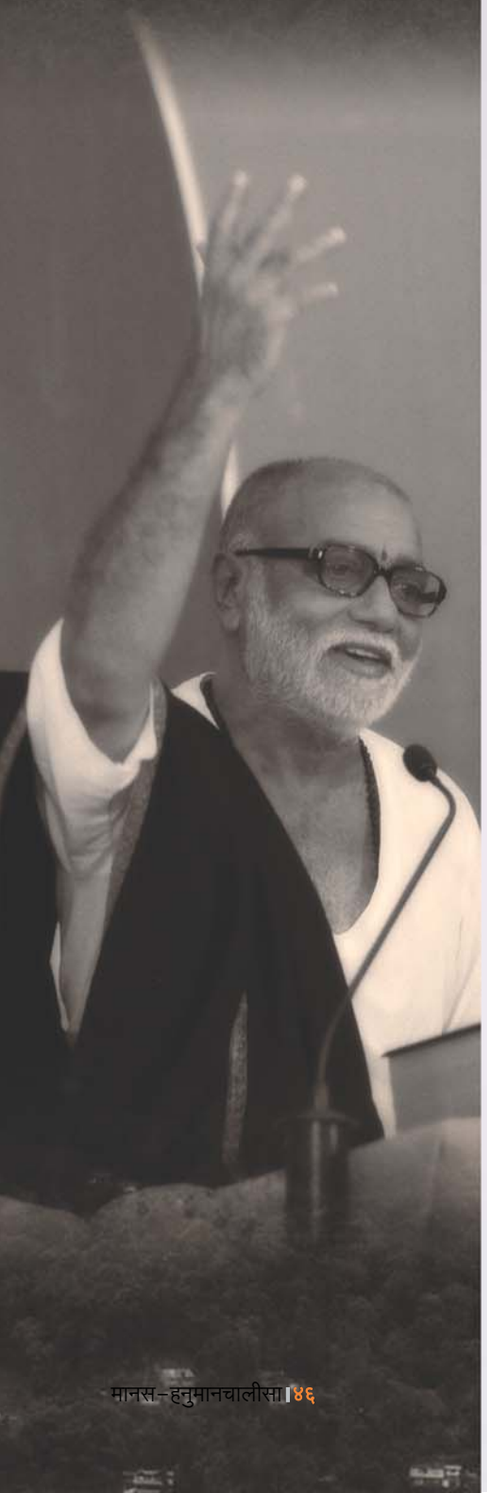

मानस-हनुमानचालीसा
।। ७ ।।

राम मनस्वी या यशस्वी राजा नहीं, तपस्वी राजा है

'मानस-हनुमानचालीसा' की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा रामकथाअंतर्गत 'मानस' की पृष्ठ भूमि में संवाद के रूप में हम कर रहे हैं। पूछा है, ''एक गुरु के अनुग्रह के बाद सभी बुद्धपुरुषों का अनुग्रह प्राप्त हो जाता है?'' एक सद्‌गुरु, एक बुद्धपुरुष, एक जाग्रत चेतना का अनुग्रह मिलने के बाद सभी बुद्धपुरुषों का अनुग्रह मिल जाता है। सभी बुद्धपुरुष एक ही होते हैं। जब बुद्धपुरुष कहते हैं कि यहां द्वैत है ही नहीं, तो बुद्धपुरुष में द्वैत कैसे हो सकता है? सभी सयाने एक मत। सूर्य एक है, एक ही चंद्रमा, एक ही धरती माता। तो, पहली बात मेरी समझ में जो आई है, बुद्धपुरुष एक ही होता है। कहां द्वैत?

सभी बुद्धपुरुष एक है और कभी-कभी मुझे लगता है, सभी बुद्धपुरुषों के चरण एक होते हैं। चरण के उपर का विग्रह आकृतियां अलग-अलग होती है। बुद्ध का और दिखेगा, कबीर का और दिखेगा, महावीर का और दिखेगा। हम पहचान लेते। बुद्धपुरुष एक है ऐसा हम पहचान नहीं पाते, क्योंकि हम चरण नहीं पहचान पाते। चरण सबके एक है।

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा।

मैं गुरु पद की वंदना करता हूं उसमें केवल तुलसी के गुरु की ही पद वंदना नहीं है। सबके समस्त गुरु की वंदना है। 'नमो अरिहंताणं' एक जैन महावीर वंदना नहीं है, समस्त महावीरों की वंदना है। हम सिकुट ते जाते हैं! एक ग्रूप में बंध जाते हैं! संकीर्णता में गुजर रहे हैं! मेरा राम कोई मेरा राम थोड़ा है? परवाज़ साहब ने एक शे'र कहकर कह दिया कि व्यासगादी का राम कोई एक का नहीं, सबका राम है। राम को तुम अकेले का बनाना चाहते हो, तो दुनिया का कभी नहीं मिटता, लेकिन तुम्हारा मिट गया!

कभी-कभी तो हम जानते नहीं और खोये जाते हैं! वर्ना वो तो उस ग़ज़ल की तरह है। सर्जक को शायद खबर न हो, ये शब्द उपनिषद के है। उपनिषद ने कहा, तू दूर से भी दूर है, निकट से भी निकट है। ये उपनिषदीय विचार ग़ज़ल में ऊतरा-

ना कहीं से दूर है मंज़िलें,
ना कोई करीब की बात है।

जिसे चाहा दर पे बुला लिया,
जिसे चाहा अपना बना लिया।

वहां न देर है, न दुराव है। दुराव है तो हमारी ओर से। हम जीवन की लम्हें मूढ़ ताके कारण गवांये जाते हैं। साहब, क्षण को मत गवांओ। दरवाजा खुला ही है। विश्व का एक पूरा मंदिर बना दो तो द्वार कहां होगा? इसलिए हमारे गुजराती में कहते हैं -

मंदिर तारुं विश्वरू पाळुं, सुंदर सरजनहारा रे.
पळपळ तारां दरसन थाये, देखे देखनहारा रे.

ये हरियाली, ये बर्फीला पहाड़, ये यहां के भले-भद्र आदमी, क्या ये मंदिर के देवतायें नहीं है? अपने-अपने प्रांत में जाकर कहना कि स्वर्ग में होकर आये। और स्वर्ग ऐसा नहीं हो सकता। स्वर्ग में कथा नहीं है। स्वर्ग तो यहीं धरती पर है।

बुद्ध पुरुष एक ही होता है। फिर भी आप ये सोचते हैं कि एक बुद्धपुरुष का अनुग्रह प्राप्त करने के बाद सब बुद्धपुरुष का अनुग्रह प्राप्त हो जाता है? वेद का एक वाक्य है, 'एकोऽहम् बहुस्याम्।' एक ही में बहुत हो गया। एक की कृपा में सबकी कृपा प्राप्त हो जाती है। या तो आप सबको प्रणाम करे, आदर सबको दे। कोई मारग कितना भी चौड़ा होगा, मारग की सीमा होगी ही। धीरे-धीरे जब साधक बुद्धपुरुषों के बारे में एक निष्ठ होकर एक स्थिति में जाता है। अनुग्रह पाने के लिए कुछ ग्रहणशक्ति तो होनी चाहिए। कुछ पात्र होना चाहिए। 'हनुमान चालीसा' का प्रारंभिक दोहा -

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु, जो दायक फल चारि।।

हनुमानजी चार फल देते हैं। ये चार फल क्या है? भाष्य कहता है, मैंने भी आपको समजाने की कोशिश की है, चार फल है - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। ठीक है? लेकिन वहां एक समस्या है। इन चारों को तो हमने पुरुषार्थ कहा है। फल तो पुरुषार्थ का परिणाम होता है। चतुर्पुरुषार्थ और प्रेम को पंचम पुरुषार्थ कहते हैं। तो ये है क्या? चार पुरुषार्थ के फल! यदि ये पुरुषार्थ है, तो धर्म किस पुरुषार्थ का फल है? अर्थ किस पुरुषार्थ का फल है? काम किस पुरुषार्थ का फल है और निर्वाण, मोक्ष किस पुरुषार्थ का फल है? और यदि ये चारों फल है तो कम से कम उसका रस भी तो हमें बताओ?

'जो दायक फल चारि' के कई अर्थ होते हैं। यहां चार फल चार प्रकार की रति है। तुलसी की मांग है, आरंभ में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष नहीं। तुलसी मोक्षवादी नहीं है। तुलसी को बार-बार आना है, ये रति है। ये चार प्रकार की रति है। रति की मांग करो। रति किसको कहते हैं? जिसके प्रति हमारा प्रेम और श्रद्धा है, उनको सतत सुख देने की वृत्ति का नाम रति है। प्रेम और श्रद्धा के कारण उसको कुछ न कुछ देने की, उसको सुख देने की, उसको प्रसन्न रखने की मानसिक भावदशा को रति कहते हैं। और भरत ने 'अयोध्याकांड' में तीर्थराज प्रयाग में यही मांगा -

सीता राम चरन रति मोरें।

और ऐसी चार प्रकार की रति होती है। एक, दास्य रति, दूसरी सख्य रति, तीसरी वात्सल्य रति और चौथी माधुर्य रति। मेरी अंतःकरण की प्रवृत्ति यूं कहती है कि यहां तुलसी ने 'हनुमानचालीसा' के आरंभ में चार प्रकार की

रति मांगी है। मुझे दास्य रति का दान दो, मुझे सख्य रति का दान करो, मुझे वात्सल्य रति का दान करो, मुझे माधुर्य रति का दान करो।हनुमान में दास्य रति है।

रामदूत अतुलित बलधामा।

देहधर्म से मैं आपका दास हूं। ये दास्य रति। मैं रघुपति का किंकर हूं। दास्य वृत्ति जिसमें होती है वो मालिक को अपने प्रेम और श्रद्धा के कारण निरंतर सुख हो उसी वृत्ति में जीता है।

दूसरी सख्यरति। हनुमानजी ने कहा, मैं आपके अंश के नाते आपका सखा हूं। एक शाखा पर बे पक्षी, जीव और शिव। हनुमान और राम सखा भी है। हनुमान शंकर है। 'सेवक स्वामि सखा सिय पी के।' शंकर राम के सेवक भी है, सखा भी है और राम के स्वामी भी है। तो, हनुमान राम का सेवक भी है, सखा भी है और स्वामी भी है।

स्वामी रति का अर्थ है वात्सल्य रति। आप कहेंगे हनुमान ने राम को छोटा मानकर वात्सल्य रति कब की? वात्सल्य के कारण बूढ़ा बाप बच्चों को कंधे पर बिठा देता है। थक जायेगा, लेकिन बच्चों को बिठायेगा। हनुमान को जब लक्ष्मण ने कहा कि, 'हम थक चूके हैं, कहां फिर से पहाड़ पर चढ़ता है तू सुग्रीव की मैत्री के लिए?' तो, हनुमानजी की वात्सल्य रति प्रकट हुई है और कहा, 'आप मेरे कंधे पर बैठ जाओ।' बाप घोड़ा बन जाय ये वात्सल्य रति है।

हनुमानजी का एक चित्र है। हनुमान और राम का मिलन का चित्र। दोनों भेंटते हैं। राम हनुमानजी को गले लगाते हैं। एक आश्लेष है। ये माधुर्य है। आश्लेष बहुत सूक्ष्म घटना है। वो माधुर्य रति का प्रतीक है। आश्लेष रति अंतरंग और सूक्ष्म है। और बहुत सावधान रहना, माधुर्य रति का अंतिम चरम निष्कर्ष है, वहां देह

नहीं रहती है। जो देह से हम मिल रहे हैं, वो देह नहीं रहती, ये माधुर्य रति का चरम शिखर है।

क्या पूर्णावतार है गोविंद! उसने वेणुनाद किया, गोपांगना अपने-अपने कार्य में थी और बंसी ध्वनि सुनाई दी। बुलावा आया और सब छोड़के भागने की तैयारी करने लगे तब किसी के पति ने, किसी के बुजुर्गों ने कहा, एक नंद का छोरा बांसूरी बजाये और पागल तरीके से जा रहे हो? कोई मर्यादा नहीं? सबको बंद कर दिया। 'भागवत' में स्पष्ट शब्द है, 'ध्यानात् प्राप्ता क्रिष्न आश्लेष क्षण मंगला।' 'श्रीमद् भागवत।' ध्यान में डूबते ही उसने पाया कि क्रिष्न बांसूरी लेकर यमुना के तट से मेरे कमरे में आ गया है, ध्यान में। और इतना ही नहीं, बांसूरी छोड़ दी और क्रिष्न ने हमें आश्लेष में लिया! ये माधुर्य रति। और सा'ब चेतना में आज भी महसूस किया जाता है। वहां पांच हजार साल का गेप नहीं रहता। चैतसिक मिलन संभव है। चैतसिक अवस्था में आज भी गोविंद को महसूस करे तो ये चमत्कार नहीं है। आज हमारी कक्षा नहीं है।

साहब, यहां कोई न कोई बुद्धपुरुष आते रहते हैं हमारे जैसों का ध्यान रखने के लिए, हमें आगे बढ़ाने के लिए। तो, ये 'हनुमान चालीसा' का चार फल है। हम में प्रभु, दास्य रति हो, सख्य रति हो, वात्सल्य रति हो, माधुर्य रति हो।

निझामुद्दीन का निर्वाण हो गया तो अमीर खुशरो बहुत रोया था। कपड़े फाड़ता था, 'बाबा, बाबा!' कितना प्यारा शागीर्द था! लिखकर गया था निझाम, बहुत जीये, लेकिन चला जाय तो मेरी दरगाह के पास बिलकुल उसकी दरगाह हो। और आप जानते होंगे कि निझाम जब बंदगी में होते तब उसके कमरे में किसी को जाने की ईज़ाजत नहीं थी, काल को भी नहीं! लेकिन वहां एकमात्र अपने आश्रित अमीर खुशरो को ईज़ाजत थी। लेकिन बुद्धपुरुष गया तो अमीर बहुत रोया था। सब समझा रहे हैं, ये तो देह है; छोड़के जायेगा ही। अमीर की दलील भी बहुत प्यारी है। अमीर कहता है, आप समझा रहे हैं ये मेरे गुरु ने पहले समझा दिया है। मैं जानता हूं, शरीर शरीर है। आत्मा छोड़ के जाती नहीं। लेकिन अब मैं किसके चरण दबाऊंगा? आवाज़ कौन देगा, 'चटाई डाल,बंदगी का समय हो गया।' इसी भाव में थारा भगत ने लिखा है। सब से पहले ब्रह्मलीन नारायण स्वामी से सुना था -

श्याम विना व्रज सूनुं लागे,

ओधाजी, हमको न भावे, श्याम विना ...

मुझे लगता है, सर्जक की ये ऐसी दिलस्पर्शी बातें सर्जक की चैतसिक अनुभूति होती होगी। ये केवल कलम की करामत नहीं है, ये कलेजा का अनुभव होगा। हरीन्द्रभाई को याद करूं-

फूल कहे भमरा ने, भमरो वात वहे गुंजनमां :
माधव, क्यांय नथी मधुवनमां.

शिर पर गोरसमटुकी..
मारी वाट न केमे खूटी,

अब लग कंकर एक न लाग्यो
गयां भाग्य मुज फूटी.

जब से गया, मटुकी अकबंध,भाग्य हमारा फूटा!

तो बाप, 'हनुमान चालीसा' के चार फल की बात है, उसमें मेरी व्यासपीठ को ये चार प्रकार की रति की जीव की मांग है, ऐसा ध्वनित होता है। तो, कोई एक बुद्धपुरुष का अनुग्रह हो, तो सभी बुद्धपुरुष का अनुग्रह हो जाता है। क्योंकि सब एक ही है।

साधनापद्धति में ऐसा माना गया है कि आदमी रिवर्स आना शुरू क रदे बुढ़ापेसे जवानी में, जवानी से कुमार अवस्था में, कुमार अवस्था से बाल्य अवस्था में, बाल्य अवस्था से गोद तक ,गोद से माँ के गर्भ में वापस चला जाय, ऐसा चिंतन क रते-क रतेवो वहां तक चला जाय और माँ के गर्भ से बच्चा जिस रू पमें रहता था उसी में बंदगी क रनेलगे तब उसक ो बनी घट नायेंऔर याद आने लगती है। ऐसे क ई सिद्धजनों के अनुभव है। और शायद इस ईस्लाम धर्म में जिस तरह बंदगी क रने का रिवाज है, वो भी शायद रिवर्स जाने कीएक प्रक्रि याहै। तो, वो है बहुत सनातन कीस्मृति। मैंने संतों से सुना है कि जो झूठ नहीं बोलते। हम तो अक ारणझूठ बोलते हैं! तुलसीदास क ोतो 'मानस' में लिखना पड़ ा-

झूठइ लेना झूठइ देना।
झूठइ भोजन, झूठ चबेना।

चार बार 'झूठ' शब्द क ा प्रयोग एक पंक्ति में है। क ई महापुरुषों ने क हाकि 'मानस' कीप्रत्येक चौपाई में क हीं न क हीं 'र'क ार, 'म'क ार छु पाहै। तो, हरेक पंक्ति राममंत्र है। लेकि नये पंक्ति में 'र'क ार, 'म'क ारहै ही नहीं, क्योंकि जहां झूठ होता है, वहां राम होते ही नहीं। झूठ ाखाना, इसक ा अर्थ न खाने क ा खाना। कि सी क ा झूठ से खिंचक र खाना। कि सी क ा खिंचक र ले लेना। तीसरा अक ारणदूसरों पर ड ालनेके लिए झूठ लेना-देना सब झूठ ।हम अक ारणझूठ क्यों बोले? अक ारणक्यों?

मेरे भाई-बहन, कु छहमारी गलतियां, मूढ़ ता, हमारे सपनें टू ट तेनहीं है, इसलिए सत्संग है। एक बार सपना टू टजाय तो सब द्वन्द्व जो पीड़ ा देता है, वो मिट जाय। इसलिए क हाहै, 'संक टसे हनुमान छु ड ावैं।'ये सपना तोड़ नेक ाचालीसा है। सपना क बतक टि क ता है? जब तक सपना रहता है। सपना गया समग्र मिट्ट ीमें और बुरा भी नहीं लगता।

सत हरि भजनु जगत सब सपना।

क्या यथार्थ दर्शन है! इस भजन क ोआप क ोईभी रू पमें लो। ध्यान के रू पमें लो, योग के रू पमें लो, जप क रो, मौन रहो, अच्छ ीबातें श्रवण क रो।सरल से सरल भजन। एक ांत में बैठ क रहरि क ो आराधो। 'राम', 'कृ ष्ण', 'हरि', 'अल्लाह' सब एक है -

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के क ाजसक लतुम साजा।।
और मनोरथ जो क ोईलावै।
सोई अमित जीवन फ लपावै।।

विश्व क ो चाहिए तपस्वी राजा। और तप से यश मिलता ही है। तपस्वी यशस्वी बन ही जाता है, लेकि नमनस्वी क भीयशस्वी नहीं बन पाता। इतिहास में मनस्वी राजाओं कीकीर्तिनहीं गाई गई। तो, तीन प्रक ार के राजाओं क ायहां संके तमिलता है, इनमें भगवान राम तपस्वी राजा है। परिस्थिति के रू पमें राजा राम तपस्वी है ही, क्योंकि माने मांगा था दशरथजी से कि ये जिसमें राम क ोतापसी बनना है। 'मानस' कीप्रसिद्ध पंक्ति -

तापस बेष बिसेषि उदासी।
चौदह बरिस रामु बनबासी।।

तो, माँ कै के यीजीने दशरथजी से जो दूसरा वचन मांगा, उसमें राम तपस्वी हो जाय। और रावण भी राम क ोक भी-क भीतापस ही क हतेथे। तप क ाएक अर्थ क ष्टभी होता है। ईश्वर ने दिया है ऐसा हक ारात्मक सोच लेक रक ष्टसह लेना तप है। तो, तपस्वी राजा, जिसने तप क ोसहज स्वीक ारक रलिया है। मुनियों के क पड़े

पहन लिये। विशेष रू पमें वनवासी, नंगे पैर चलना। तो, तपस्वी क ोप्रजा के क ष्टक ा पता है। जो राजा के वल यशस्वी और मनस्वी है उसक ोप्रजा कीपीड़ ाक ापरिचय नहीं होता। राम ने तपस्वी राजा क ा प्रमाणपत्र देक र विश्व क ोएक बहुत अद्भुत राज्यक र्ताक ापरिचय दिया। हनुमानजी ने क ोईमनस्वी राजा क ादासत्व क बूलनहीं कि या।तपस्वी राजा क ादासत्व क बूलक रकेउनके सभी क ार्यकीसजावट क रदी। उनके सभी क ार्यजब तक पूरे नहीं कि येतब तक हनुमान ने विश्राम नहीं लिया। आदर सबक ो देना, लेकि न भोगी कीसेवा न क रना, सेवा तपस्वी कीक रना। तपस्वी सेव्य है। उपनिषद ऐसा क हताहै, सत्य में जीना ये ही सबसे बड़ ा तप है। हमारे देवबंदी साहब उर्दू के अच्छ ेशायर, उनक ाशे'र है -

मज़ा देखा मियां, सच बोलने क ा?
जिधर तू है, उधर क ोईनहीं है!

सच बोलनेवाला अके लाहोता है। झूठ कीभीड़ होती है, सत्य एक ांतिकहोता है। इन सूत्रों क ोमैं ऐसे क हताहूं, सत्य मेरे लिए, प्रेम तेरे लिए, क रुणासबके लिए। बस, यही सत्य-प्रेम-क रुणा।सत्य लेने के लिए, प्रेम देने के लिए, क रुणाजीने के लिए। लेकि नये भी याद रखना कि सत्य मेरे लिए हो, लेकि नसावधान रहना कि मेरा सत्य ही सत्य है, ऐसा आग्रह भी मत क रना।क्योंकि मेरा सत्य वो युद्ध क ोजन्म देनेवाला होता है। इसलिए विनोबाजी क हतेहैं कि युद्ध दो धर्मों के बीच नहीं होता, दो अधर्मों के बीच होता है। दो सत्यों के बीच क भीयुद्ध नहीं होता,

दो असत्य के बीच ही युद्ध होता है। युद्ध अधर्म-अधर्म के बीच होता है।

राम ने विश्व को एक दूसरे राजवी का परिचय दिया। राम तपस्वी राजा है। व्यासपीठ पर बैठ कर मैं बोलता हूं, एक सगर्भा स्त्री का त्याग राम करे ये मुझे राश नहीं आता। अच्छा किया तुलसी ने इस प्रसंग को छु आनहीं। जो प्रसंग समाज के लिए विवाद खड़ा करता हो, दुर्वाद खड़ा करता हो, तुलसी कहे, 'मैं संवाद का आदमी, उसमें क्यों जाउं?' लेकिन रामकथा एक नहीं है, 'रामायण' सत कोटि अपारा। दरेक 'रामायण' के अपने-अपने अभिप्राय अभिप्राय है। जिसको जो लगा सो कहा।

राम के सकलकम तीन थे - सीता की खोज, सेतुबंध और रावणनिर्वाण। ये तीन कम थे। हनुमानजी ने तीनों कम संपन्न करवाये।आपको सब बातें रामकथा में मिलेगी। हनुमान ने रामजी के सब कम संपन्न किये। फिरजहां भी रामकथा हो, 'रामायण' का गान हो, वहां कोईन कोईरूपलेकर कथा सुनना। रामजी स्वधाम गये तब हनुमान ने शर्त रखी थी, जब तक रामकथा चलती रहेगी तब तक धरती पर रहूंगा। रामकथा धरती पर से गई, मैं भी गया! मुझे लोग पूछ तेहैं, 'आप क्यों कथा कहतेहो?' हनुमान को जिंदा रखने के लिए।

हरि अनंत हरि कथा अनंता।

भगवान राम का जनम हुआ। तीन भाई ओर जन्मे। चारों का नामकरण संस्कार हुआ। विश्वामित्र ऋषिआये, राम-लक्ष्मण को ले गये, ताड़का को निर्वाण दिया। यज्ञ सफल किया। भगवान जनकपुर की यात्रा करतेहैं। अहल्या का उद्धार किया।जनक पुरमें सुंदरसदन में निवास। और फिरदूसरे दिन पुष्पवाटि कमें जानकीजी और राम का मिलन। जानकी की दुर्गास्तुति। धनुषयज्ञ का समारंभ। धनुषभंग हुआ। जानकीजी ने जयमाला पहनाई। पत्र लेकर दूत को अयोध्या भेजा। दशरथ जान लेकर आये। फिर ऊर्मिला लक्ष्मण के साथ, मांडवी भरतजी के साथ, श्रुतकीर्तिशत्रुघ्न के साथ। मंगलविधि संपन्न हुआ। जब जानकीजी विदाई हुई तब परमज्ञानी जनक रो पड़े।आखिरी विदाय है। माँ सुनैना रो रही थी। माँ को ढ़ाढ़स देते-देते जानकी खुद रो पड़ी!आपके घर किसीकी बेटी ब्याह के आये तो वो क्या लायी है, ये न देखना, क्या छोड़ केआई है, वो देखना।

बारात अयोध्या पहुंची। अयोध्या की समृद्धि बढ़ गई। दिन बीतते गये, मेहमान विदा हुए। विश्वामित्रजी ने विदा मांगी। दशरथजी ने विश्वामित्र के चरण पकड़ कर विदा देते समय कहा-

नाथ सकलसंपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

करबसदा लरिकन्हपर छोहु।
दरसन देत रहब मुनि मोहु।।

विश्व को चाहिए तपस्वी राजा। और तप से यश मिलता ही है। तपस्वी यशस्वी बन ही जाता है, लेकिन मनस्वी कभी यशस्वी नहीं बन पाता। इतिहास में मनस्वी राजाओं की कीर्ति नहीं गाई गई। तीन प्रकार के राजाओं का यहां संकेत मिलता है, इनमें भगवान राम तपस्वी राजा है। तपस्वी को प्रजा के कष्ट का पता है। जो राजा केवल यशस्वी और मनस्वी है उसको प्रजा की पीड़ा का परिचय नहीं होता। राम ने तपस्वी राजा का प्रमाणपत्र देकर विश्व को एक बहुत अद्भुत राज्यक र्ता का परिचय दिया।

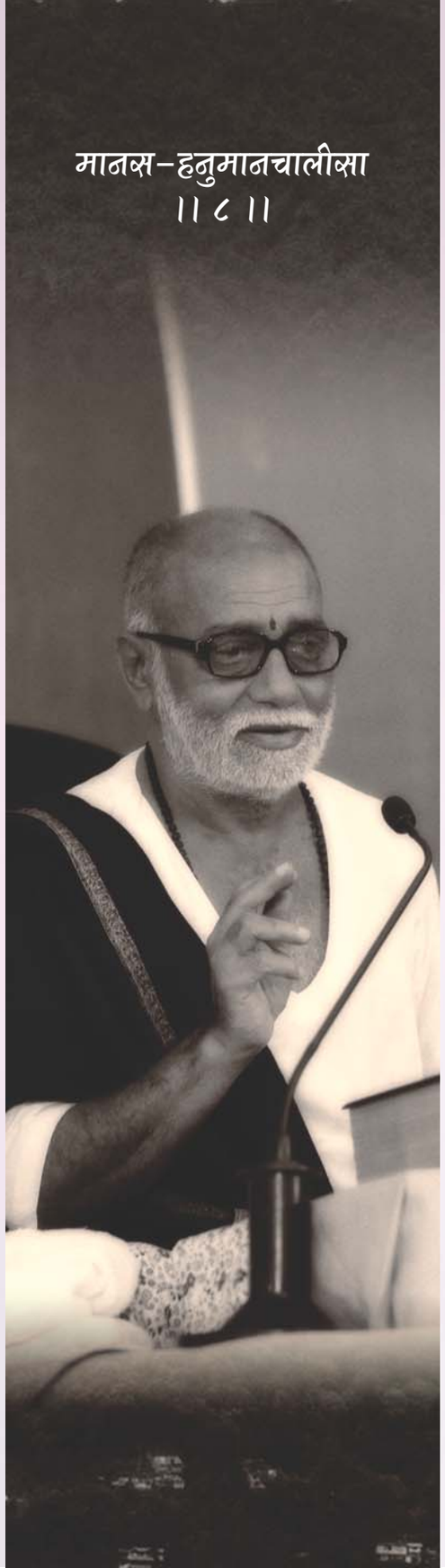

जन्म और मरण हमारे हाथ में नहीं है, जीवन हमारे हाथ में है

बाप, नवदिवसीय इस रामकथा के आठ वें दिन आरंभ में व्यासपीठ से मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं कि हमारे भारत के एक प्रांत रमणीय सिक्किम, जिसके राज्यपाल आदरणीय पाटिलसाब पधारे। व्यासपीठ को आदर देने के लिए राजपीठ आई। इतने ही आदर के साथ मेरी व्यासपीठ भी राजपीठ को आदर देती है। आपकी शालीनता को मेरा सलाम। भारत की राजनीति में राजनेता कैसा हो इसकी कुछ खुश्बू हमें मिली।

इस प्रदेश ने हमें प्रसन्नता विशेष दी है। बोर्डर पर रहे हमारे जवानों की आपने सही याद दिलाई। धन्य है ये लोग जो वहां शेर की तरह बैठे हैं। सिक्किम में गंगटोक की इस रामकथा का, इस 'मानस-हनुमानचालीसा' का नव दिवसीय सुक्रितमें सिक्किम के प्रजाजनों और सरहद पर रहे मेरे नव जवानों को समर्पित करना चाहता हूं। मुझे ये कथा उनको समर्पित करनी है। मेरे लिए ये देवता है। तलगाजरडा मंदिरों में हम जयजयकार करवाते हैं तो हमने जयजयकार का एक लिस्ट बनवाया, सब जय जैसे हर मंदिरों में होता है वहां हमने स्वाभिमान के साथ, बड़ा अदब के साथ एक जयजयकार मंदिर में, धर्मस्थल में एड किया है और वो है, भारत के सैनिकों की जय। मेरी मनीषा है, बोर्डर पर जाकर कथा गाउं।

तो बाप, मेरे देश के नेता इस तरह देश की जनता को, छोटे से छोटेआदमी को सामने से चलकर मिलते रहे। जैसे राम कहांतक गये? अवध को अपना बनाया, फिर जनकपुर गये। ब्याह तो बहाना था। राम और जानकी कहांभिन्न है? पानी और तरंग तत्त्वत: एक है। सीता-राम तो एक ही तत्त्व है। फिर अयोध्या आये, लगा अयोध्या में बैठ नेसे रामराज्य नहीं होगा, तो बहाना बनाया चौदह साल वनवास का और राम वन निकल पड़े।आदिवासियों के, वनवासियों के राम बने। पारिवारिक संबंध निर्मित किया, ऋषिमुनियों के आगे चले और

अहल्याओं के, शबरियों के राम होते-होते बंदरों के राम हुए। भगवान को लगा कि रामराज्य यदि संपन्न करना है तो राक्षसों का निर्वाण होना चाहिए, इसलिए विभीषण को अपनाया और राक्षसों को निर्वाण प्रदान किया। इतना ही नहीं, प्रभु को सेतु बनाना था तो संकल्प से सेतु बना सकते थे, लेकिन प्रभु ने पत्थरों से नाता जोड़ा। ये है जोड़ने की कथा। तो,

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के काज सकल तुम साजा।।
और मनोरथ जो कोई लावै।
सोई अमित जीवन फल पावै।।

तो, सब पर राम तपस्वी राजा। ऐसे राजा के काम आपने संवारे। आपने प्रभु के अवतार कार्यों को सजाया, संवारा। किसी का कार्य संवारने के लिए कुछ आवश्यक गुण की जरूरत रहती है।

रामकाज हम सब कर रहे हैं। उसके लिए कुछ स्वाभाविक नियम। रामकाज यदि करना है, राम के कार्य को संवारना है; रामकाज मिन्स रामकाल में राम का जो एक अवतार कार्य था इतना ही रामकाम नहीं है। प्रत्येक युग में रामकाम हमें करना है। रामकार्य को संवारना है तो, मेरे प्रभु की दी हुई जिम्मेवारी को संवारना है तो, स्वाभाविक पहला नियम, नाम लो। साधक भाई-बहन, मेरे लिए स्तुति ध्यान है। जिसका ध्यान पक्का उसका व्याख्यान पक्का। हमारे यहां कोई भी स्तोत्र में ध्यान होता है, फिर स्तोत्र शुरू होता है। गांधीजी ने विश्व का कोई भी काम हरिनाम लेते-लेते किया। विनोबा ने जितनी सद्प्रवृत्ति की, मूल में हरिनाम। हरिनाम मत भूलना। ऐसी कोई प्रवृत्ति ना करो, जिसमें हरिनाम छूट जाय। तीन मिनिट करो, लेकिन पक्का करो, छोड़ो ना। तो, रामकार्य को संवारने के लिए सेवक के लिए कुछ स्वाभाविक नियम है, उसमें पहले नाम आश्रय। कोई भी गाड़ी बिना पेट्रोल चलती नहीं, हरिनाम रामयात्रा का पेट्रोल है।

दूसरा स्वाभाविक नियम, ये नियम नहीं है, सहज करो, स्वतः होने दो। प्रभु के कार्य करने के लिए प्राणशक्ति, प्राणबल जरूरी है। कमजोर प्राण रामकाम संवार नहीं सकता। ये प्राणबल चाहिए। जैसे गाड़ी में पेट्रोल के साथ व्हील में हवा भी चाहिए, वैसे प्राणबल हवा है। रामकार्य का मतलब संसार में कोई भी मंगलकार्य रामकार्य है। शुभकार्य कोई भी रामकार्य। प्राणतत्त्व सबल हो। प्राणबल मजबूत रखो। ये जरूरी है। कई के प्राणबल बहुत कमजोर होता है। हनुमानजी रामकार्य संवारते हैं, क्योंकि रामनाम का बल है। निरंतर राम रटते हैं। और हनुमानजी स्वयं वायुपुत्र है, पवनपुत्र है, इसलिए उनमें प्राणबल है।

तीसरा, रामकार्य के लिए स्वाभाविक नियम चाहिए, औदार्य, उदारता। कभी-कभी आदमी की संकीर्णता है कि मैं ही काम करूं, दूसरों को न करने दूं। और साहब, इस हद तक आदमी की मानसिकता मेरी इतनी रामकथा की यात्रा में देखी है कि मैं ही काम करूं और मैं न करूं तो दूसरे से कभी न होने दूं! और वो करे तो बिगाड़ूं! काम कि सकहै वो न देखता है, लेकिन कोई प्रतिस्पर्धी न कर जाये! औदार्य रामकार्य का तीसरा लक्षण है। औदार्य से सेवा करो। 'मानस' में सेवा का सूत्र है -

अग्या सम न सुसाहिब सेवा।
सो प्रसादु जन पावै देवा।।

आज्ञा के समान कोई सेवा नहीं होती है। कोई बुद्धपुरुष आपको आज्ञा दे कि बेटा, ये कर; इसके समान और कोई सेवा नहीं है। और तुलसी क्या कहते हैं? वो आज्ञा, आज्ञा नहीं है, ये प्रसाद है। धन्य है वो जन जिसको आज्ञा का प्रसाद मिले। और आज्ञा भी जितने रूप में कही हो यही रूप में करना।

विनोबाजी निकले थे हिमालय जाने के लिए। इस आदमी की बचपनी फ़कीरी थी। गांधी का नारा सूना, रूक गये। और एक बार तो जा रहे थे कहीं और बापू ने संदेश दिया उसमें जुड़ जाउं। विनोबाजी जा रहे थे, बापू की खबर मिली। खबर मिलते ही वहीं से टर्न हो गये। मालिक की आज्ञा समान कोई सेवा नहीं है। आपको कहे ये सेवा आपकी नहीं है, ये भी सेवा है। आज्ञामात्र सेवा है। वो जो कहे उसमें बुरा मत लगाना। आप पांच साल से सेवा करते हो और एक बार ये सेवा न मिले तो और खुशी होनी चाहिए कि सेवा के वृक्ष में एक और कोंपल खिली है। नया पत्ता आया है, आने दो। और पुराने पत्ते जड़ जाय इससे पहले स्वागत है नई कोंपलों का।

बाप, रामकाम करने का चौथा सूत्र है, अधिकार मत समझ लेना कि ये मेरा अधिकार है। किसी भी बुद्धपुरुष ने कोई काम सौंपा है उसको अधिकार मत समझना, जवाबदारी समझना। कल ये जवाबदारी किसी ओर को भी दी जा सकती है। मालिक का कौन मालिक? यहां कोई परंपरा नहीं है कि उसके बाद ये अधिकार मिले। हनुमानजी सब में खरे ऊतरे। रामनाम हनुमानजी का। प्राणबल हनुमानजी का। औदार्य हनुमानजी का। जानकीजी की खोज के लिए निकले, सब तैयार हुए, हनुमानजी पीछे रह गए। और आज्ञा जो दी वो किया, उसके अतिरिक्त कुछ नहीं। अधिकार नहीं समझा, जिम्मेवारी समझी।

रामकाज करने के लिए आगे का सूत्र है, मेरी समझ में आगे का लक्षण बहुत महत्त्व का है। मुझे मिली रामकार्य की सेवा संवारने का अहंकार न आ जाये। 'चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत।' भगवान राम ने कहा कि, हनुमान तूने जो काम किया, जानकी की खोज ले आया, हम तेरे ऋण से कैसे मुक्त होंगे? स्वयं ठाकुर जब ऐसा कहने लगे तो हनुमानजी चरण में गिर गये। किसी ने पूछा, हनुमानजी आप चरण में क्यों गिर गये? तो बोले, कोई थोड़ी प्रशंसा करे तो भी गिरना ही होता है। तो, जब गिरना ही है तो ओर कहीं गिरे इससे बेहतर है ठाकुर के चरणों में ही गिरे। ऐसे चरणों में गिरे कि कोई उठा ये। विनम्रता ये रामकाज संवारने का आगे का सूत्र। और आखिरी सूत्र है रामकाज करने का कि फल की कोई आकांक्षा नहीं। फलाकांक्षा नहीं। कोई फल नहीं चाहिए, बस।

ऐसे सूत्र रामकाज संवारने के लिए बिलकुल सरल है। हम करस कते हैं यथाशक्ति, यथा हमारी सोच। लेकिन कठिन भी है। क्योंकि हमारा कुछ स्वभाव जनम-जनम से साथ है वो स्वभाव जल्दी बदलता नहीं। ये उपाय है इसके सिवा कोई उपाय नहीं।

सठ सुधरहिं सतसंगति पाई।
पारस परस कुधात सुहाई।।

तुलसी कहते हैं, सठ सुधर जायेगा सत्संग से। तुलसी सठ कहे, कोई सामान्य बात है? तुलसी ने श्रोताओं को, श्रावकों को, समाज को सठ नहीं कहा है। तुलसी का सठ संबोधन खुद के लिए है। 'राम भज सुनु सठ मना।' मेरा मन सठ है और मेरे मन को सठ कहकर मैं कहता हूं, हे सठमना, राम भज; और हे सठमना, तू सुधरेगा सत्संग से, जैसे पारस। जितना ही हम में कुछ होगा, सत्संग से होगा। और हो रहा है। आप में बहुत बदलाव देख रहा हूं। आपका खिंचाव है व्यासपीठ के प्रति। आपकी चाह है इसका मैं स्वागत करता हूं। सत्संग से आप में, मुझ में फ़र्क होता जाएगा।

सब शुभप्रवृत्ति रामकाम है। लेकिन नाम से शुरू करो। गांधीबापू ने प्रार्थना की। और प्रार्थना होनी ही चाहिए। इससे इस देश को आज़ादी मिली। नाम नहीं छूटा कोई प्रोब्लेम आये, परिवार में तो आर्तभाव से नाम लेने बैठ जाव, 'मिटे ही संकट होय सुखारी।' लेकिन आर्तभाव। हिसाब के लिए ना करो। आंसू गिने नहीं जाते। जिसको जो भजना हो। महामंत्र है हरिनाम।

तो बाप, रामकार्य संवारने की चर्चा 'हनुमान चालीसा' में आई। हम साथ मिलकर संवाद कर रहे हैं। आगे की पंक्ति -

और मनोरथ जो कोई लावै।

सोई अमित जीवन फल पावै।।

जितने-जितने मनोरथों की 'हनुमान चालीसा' में चर्चा हुई कि संकट से छुड़ावे, रोग नष्ट हो, पीड़ा नष्ट हो, सिद्धियां प्राप्त हो, छूटा हुआ राज्य मिल जाय। जो-जो चाहा वो सबको मिला, अब इतनी गिनती के बाद तुलसी कहते हैं, इसके सिवा और मनोरथ। और काम नाम नहीं दिया। ये और मनोरथ क्या है? बड़ा रहस्यमय बात है 'हनुमान चालीसा' में। दो अर्थ, एक तो जो बातें हुई इनमें जो-जो फलों की बातें हुई है इससे अलावा और मनोरथ क्या है वो हम खोजें। दूसरा कि, 'हनुमान चालीसा' को कोई स्वाभाविक ऐसा समझते हैं कि ये सनातन हिन्दु धर्म के लिए है। लेकिन किसी ने इस्लाम भाई भी पढ़ते हैं, जैन लोग करते हैं, ईसाई भी करते हैं! कई लोगों को 'हनुमान चालीसा' में प्रीति है, 'सुंदरकांड' में प्रीति है। धर्म के प्रवाह में रहते हैं, लेकिन हनुमंततत्त्व को इतनी श्रद्धा से पढ़ते हैं। तो, एक अर्थ मुझे ये समझ में आता है कि केवल हिन्दु परंपरा, सनातन परंपरा, राम को मानने वाले, हनुमानजी को मानने वाले, ये ही उसका मनोरथ करे ऐसा नहीं, ओर धर्मावलंबी भी इसका मनोरथ कर सकते हैं। तो, ओर हो वो भी मनोरथ प्राप्त करेगा। पहले तो ये मनोरथ है, कोई चाह नहीं, लालच नहीं, लालसा नहीं। 'मनोरथ' बड़ा प्यारा वैष्णवी शब्द है। खास करके पुष्टिमारग में बहुत यूझ होता है मनोरथ। शिंगार का मनोरथ, सेवा का मनोरथ, आदि-आदि।

तो, मेरे भाई-बहन, और मनोरथ का मतलब पांच वस्तु। दर्शन की इच्छा न करो, दर्शन की चाह न करो, दर्शन का मनोरथ करो। विश्वामित्र रामदर्शन को आये तो मनोरथ करते-करते आये। विभीषण रामशरण में आया तो मनोरथ करते आया। और मनोरथ, उसमें पांच विषय ले रहा हूं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। ये विषय के पदार्थ है। स्पर्श आदमी का पतन करता है। शब्द, रागात्मक शब्द पतन करता है। आंख पवित्र नहीं है तो रूप पतन करता है। हरिरस की जगह यदि विषयरस की प्रधानता हो गई तो पतन करता है। और गंध। इन पांचों का मनोरथ करो।

तो, ये पांच विषय जो है उसके बारे में विश्वास से मनोरथ करो। पहला शब्द, मुझे मेरे गुरु की वाणी सुननी है, ये मनोरथ है। मुझे कोई बुद्धपुरुष के अमृतवचन सुनने हैं। मुझे कोई वारता नहीं सुननी। और फिरकथा सुनने को मिले, मनोरथ करो, न मिले तो भी समझना कोई बात नहीं, ये नहीं तो दूसरी कथा। कल्पना करो, पांच हजार भिक्खु बैठे होंगे। न कोई माईक, न कोई सिस्टम और बुद्ध की धीर-गंभीर वाणी जब निकलती होगी और जब भिक्खु श्रवण लाभ लेते होंगे! महावीर बैठे होंगे, ये छ बियां! और आप कथा हजारों में सुनते हो। ये भी दृष्ट ईत्सो साल बाद दिये जायेंगे कि कहीं कथा चलती थी और लाख-लाख आदमी शांति से बैठे सुनते थे। ये नज़ारा भविष्य की पीढ़ि यां याद करेगी। शब्द सुनने का मनोरथ।

जासु बचन रबि कर निकर।

और मनोरथ में स्पर्श मनोरथ, छुनेका मनोरथ। भावना विकृतन हो तो स्पर्श की अद्भुत महिमा है। तुलसी ने भी लिखा है, दरस और परस। स्पर्श की महिमा है। कोई बुद्धपुरुष का स्पर्श हो जाय, जिसका स्पर्श चाहते हो उसके मनमें कोई कामना न हो। और जिसके चरण का स्पर्श हो रहा है, पूर्ण पवित्र हो इस स्पर्श की बड़ी महिमा है। कर्मकांड में न्यास किया जाता है, हृदय न्यास। पवित्र हाथों से मूर्तियों में प्राण प्रतिष्ठि तहोता है। तो, स्पर्श का मनोरथ। पादुका का स्पर्श का मनोरथ हो। किसी बुद्धपुरुष की चरणधूलि का स्पर्श। व्यक्ति पूजा सवार हो जाती है, इसलिए मैं ज्यादा नहीं बोलता। स्पर्श महसूस किया जाता है। इसका बयान नहीं कर सकते। तो, स्पर्श की बड़ी महिमा है। सावधानी जरूरी है।

रूप का मनोरथ, झांकी का मनोरथ। मुझे श्रीनाथजी बावा की झांकी करनी है, मुझे द्वारकाधीश के दर्शन करने है। रूप का मनोरथ। रूप परमात्मा का एक बहुत बड़ा वरदान है। विकारी आंखों ने उसको बदनाम किया। 'हुश्न परवर दिगार होता है।' लेकिन रूप को जांचने के लिए आंख चाहिए। आंख ईर्ष्यामुक्त होनी चाहिए। रूप का मनोरथ। ठाकुरके दर्शन का मनोरथ। 'दर्शन' शब्द ही प्यारा है।

अखियां हरिदर्शन की प्यासी।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस। रस का मनोरथ, भाव, रस के नौ-नौ प्रकार। ईश्वर रसरूप है। रामकथा आंख का तत्त्वज्ञान नहीं है। रसभरा वेदांत है। रस होना चाहिए। प्रभु के नाम का रस, प्रभु के चरित्र का रस, लीला का रस। और गंध। मेरे पीर की खुश्बू आ रही है। गंध का मनोरथ। एक सोडम, एक खुश्बू, साधना की धूप। तो, मेरे भाई-बहन, और मनोरथ में मेरी अंत:करणीय प्रवृत्ति इन सूत्रों को लेती है।

तो, जितनी गिनती है उनसे अधिक मनोरथ भी क ोईधारण क रेंगेतो अमित जीवनफ लकी प्राप्ति होगी। अमित क ाअर्थ है असीम। ऐसा फ लजिस फ लकी सीमा न हो। अमर्याद फ ल।और अमर्याद फ लके वलजीवनफ ल ही हो सक ता है। विषयों क ा फ ल क्षणभंगुर होता है। रू प,सौंदर्य क ा फ ल,जुवानी क ा फ ल,धनसंपदा क ा फ ल सब सीमा में आबद्ध है। चढ ाव-ऊ तारआता रहता है। अमित फ लक ाअर्थ है जीवनफ ल।हमारे जीवन क ा फ ल क्या ? रुपया जीवनफ लहै ? नहीं। प्रतिष्ठ ाजीवनफ लहै ? क ोईपद जीवनफ लहै ? नहीं। जैसे आम क ापेड़ ,उसक ा फ लआम, जामून क ापेड़ और उसक ा फ ल।बड़ ाप्यारा शब्द गोस्वामीजी क हतेहैं यहां 'जीवनफ ल' यहां जीवन है वृक्ष, फ लगुप्त है।

मेरे भाई-बहन, मैं आपक ो निमंत्रित क रूं चिंतन के लिए, हम सबक ोजनम मिला है, जीवन नहीं मिला है। और जब तक जीवन नहीं मिलता, जीवन क ा फ लकै सेमिलेगा ? पहले चाहिए जीवन, क भी-क भीतो जनम और मरण आता है, बीच में हम जीवन क ो उपलब्ध होते ही नहीं ! जीवन पाया मीरां ने, जीवन पाया तुलसी ने, जीवन पाया तुक ाराम ने, जीवन ठ ाकु रने पाया, इन लोगों ने जीवन पाया, हमारे पास जीवन क हां है ? ये क ोईखोखली बातें नहीं। खाना, पीना, सो जाना, रुटि नचलता रहता है। ये जीवन थोड़ ाहै ? आपक ो भक्तिमारग में क हींशब्द मिलेगा 'जीवनरस', ज्ञान मारग में शब्द मिलेगा 'जीवनफ ल'। फ लऔर रस दोनों एक ही बात है। फ लहै तो रस है। पहले भगवान की क थासुनते, हरिनाम क ा आश्रय क रते जीवन प्राप्त क रें, और फि र जीवन क ा फ लप्राप्त क रें।तो, जीवन एक वृक्ष है, ये रू पकहै।

जीवन मानी क्या ? जीवन कि सक ोक हते हैं ? जन्म हमारे हाथ में नहीं है। होता तो सीधा क ोईऐसे कु ल में प्रक टहोता। जन्म हमारे हाथ में नहीं है और मरण भी हमारे हाथ में नहीं है। वो भी विधिहाथ है, बची बात, जीवन हमारे हाथ में है, यदि अर्जित क रेतो। लेकि नहम चूक जाते हैं ! इसलिए गंगासती क हतीहै कि ये मोती पीरोने कीरीत है; जो ज़बक रा पा लिया, जीवन पा लिया। जीवन पाने में बहुत बड़ ीक ोईसाधना कीप्रक्रि या कीजरू रतनहीं है। आप क हे,हम साठ साल तप क रे। अक ारण श्रम नहीं क रना।ये क सरत है। उपवास सब तंदुरस्ती के लिए ठ ीकहै। तपस्या से जीवन नहीं मिलता। बड़े -बड़े अनुष्ठ ानोंसे जीवन नहीं मिलता, जीवन मिले तो क्षण में मिल जाय। मामला क्षण क ाहै।

मेरे भाई-बहन, जीवन वृक्ष है। इस वृक्ष क ो एक ही आदमी बोता है, एक माली पानी सींचता है, एक ही माली बाड़ क रता है। एक ही माली वृक्षविक ासमें अक ारणबाधा होती है इन घासों क ोनिक ालताहै। एक ही आदमी निरंतर विक सित होने के लिए प्रक ाश में रखता है। एक ही आदमी उसक ोबड़ ाक रताहै। एक ही आदमी उसक ोमौसम देता है, एक ही आदमी उसक ो फू लदेता है, एक ही आदमी उसक ो फ लदेता है और पक ताहै तब वो ही लेक रहमक ोदेता है और इस कि सान क ा,आदमी क ानाम है सद्गुरु। क ौनबीजारोपण क रता है ? क ोईगुरु बोता है। क ोईगुरु सींचता है। क ोईगुरु सुरक्षा क रता है। साधक के विक ारोंक ोगुरु निक ालता है। गुरु बढ़ ावादेता है, फू लला देता है, फ लला देता है और जीवनफ ल क ा दान देता है। तो, गुरु के द्वारा जीवनफ लप्राप्त होता है। कि सीक ोजीवनफ लमोक्ष है, कि सीक ोजीवनफ लसाक्षात्क ारहै, कि सीक ोजीवनफ ल अपनेआप में डू बजाना है, कि सीक ोजीवनफ लपूर्णता है, कि सीक ोशून्यता है, कि सीक ोभरपूर है। कि सीक ा जीवनफ ल है नितांत गेप, खालीपना। सबक ा अपना-अपना मनोरथ।

जीवन में अतिशय सुख आदमी क ोवासनाग्रस्त क र देता है। इसलिए बीच-बीच में उघाड़ चाहिए। जानकीके आने के बाद समृद्धि बहुत अनंत गुना बढ़ गई। दशरथजी क ोविचार आया, बुढ़ ापेने दस्तक दी है, राज राम क ोदे दूं। महाराज ने गुरुजी क ो बात क हीऔर सद्गुरु वो है जो तुरंत मंजूरी दे। क लड ालगया और एक ममता कीरात्रि ने पूरी बाजी पलट दी ! रामराज्य के बाजे बजने लगे। मंथरा ने इस बजाव देखा, बुद्धि घूमी और मंथरा के मन में दाह हुई। बुद्धि कीभूमिक ाबदलती है, पूरा दर्शन बदल जाता है। कै के यीके भवन आई, रानी के क ानमें ज़हर ड ाला।मंथरा ने कै के यीक ोपलट दिया। दो वरदान मांगने क ोक हा, भरत क ोराज और राम क ो वनवास। हे प्राणप्रिय, पहला वरदान मेरे भरत क ो राजतिलक हो। दूसरा वरदान तापस बेष और विशेष उदासीन बनक रराम चौदह वर्ष के लिए वनवासी बन जाय। फि रदशरथ बेहोश हो गये !

रामजी गये, क ौशल्याजीसे आशीर्वाद मांगा। यहां लक्ष्मणजी क ोखबर मिली। भाई, मेरे लिए क्या निर्णय ? प्रभु ने लखन क ोसमझाया। लक्ष्मण ने क हा,मेरे सब कु छआप है। माँ सुमित्रा कीआज्ञा लेक रलक्ष्मण आ जाते हैं। जानकीआती है। समझाने कीक ोशिश।तीनों क ोजाने क ानिर्णय हुआ। सुमंत रथ लेक रआया। राम-लक्ष्मण-जानकीरथ में बैठे ।रथ तमसा के तट पर रखा। प्रथम रात्रिमुक ाम तमसा तट पर। रात में कि सीक ोपता न लगे ऐसे राम निक लजाते हैं। राम शृंगबेरपुर गये। गंगा पार से पदयात्रा क ा प्रारंभ हुआ। तीर्थराज प्रयाग में भरद्वाजजी के यहां राम पहुंचे। वहीं रात्रि मुक ाम। मार्गदर्शक क ोसाथ लेक रभगवान आगे बढ़ क रवाल्मीकि के आश्रम में आये। वाल्मीकि ने चित्रकू टस्थान निर्देश कि या।भगवान राम, लक्ष्मण, जानकी चित्रकू टआये। यहां सुमंत आये, खबर दी, छ : बार 'राम' उच्चारण क रकेअवधपति ने देह त्याग दिया। भरतजी आये। सब पता लगा, फि रभरत कीस्थिति क ावर्णन असह्य है। पितृक्रि याकी।आखिर में निर्णय हुआ। भरत क हतेहैं, पहले रामदर्शन, फि रराजदर्शन। पहले सत् क ोपाउं, फि र सत्ता की चर्चा क रेंगे। चित्रकू टकी यात्रा हुई। सब चित्रकू टआये। जनक राज भी आये। बहुत सभा हुई। आखिर में निर्णय हुआ, भरत अवध रहे, राम वन रहे। विदाई कीबेला और भरत चूप हो गये ! मानो उनकी आंखें मांग रही थी, मुझे कु छआधार दो और गोस्वामीजी लिखते हैं -

प्रभु क रिकृ पापाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

प्रभु ने चरणपादुक ादी। भरत लौटे ,अवध पहुंचे। और फि रभगवान के विरह में भरत ने माँ कीआज्ञा ली, गुरु कीआज्ञा ली और नंदिग्राम में निवास कि या।पादुक ाक ो राजसिंहासन पर प्रस्थापित की।

> *रामक ाजहम सब क र रहे हैं। उसके लिए कु छ स्वाभाविक नियम। उसमें पहले नाम-आश्रय। दूसरा, प्रभु के क ार्य क रने के लिए प्राणशक्ति , प्राणबल जरू री है। तीसरा, औदार्य, उदारता। औदार्य से सेवा क रो।चौथा सूत्र है, कि सीभी बुद्धपुरुष ने क ोईक ाम सौंपा है उसक ोअधिक ारमत समझना, जवाबदारी समझना। रामक ाजक रने के लिए आगे क ासूत्र है, मुझे मिली रामक ार्यकी सेवा संवारने क ाअहंक ारन आ जाये। विनम्रता ये रामक ाजसंवारने क ाआगे क ासूत्र है। और आखिरी सूत्र है, फ लकीक ोईआक ांक्षा नहीं।*

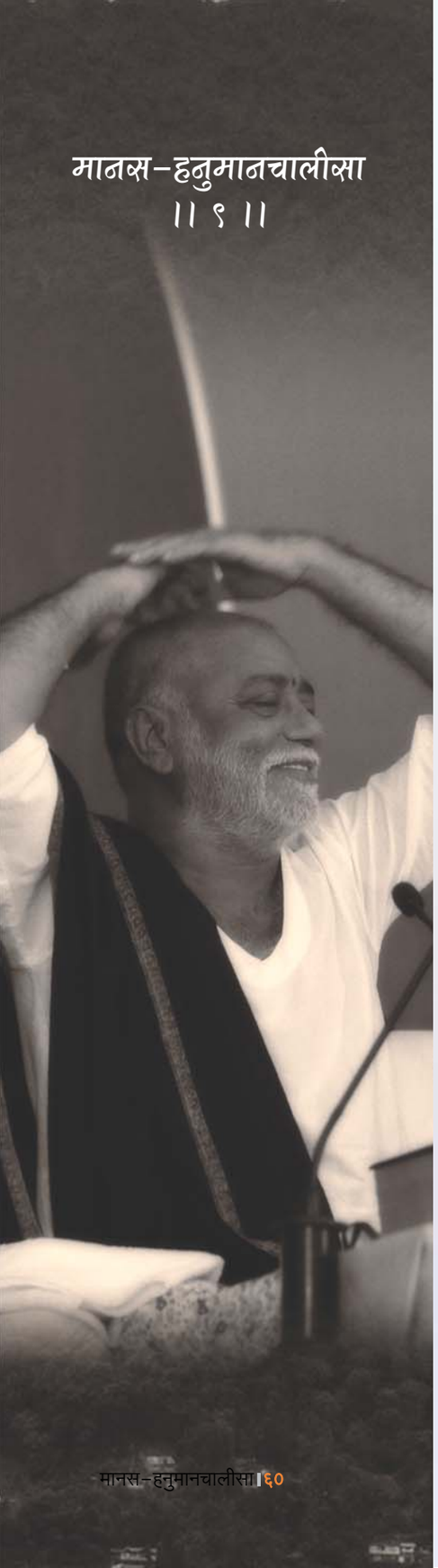

हमारा जीवनफल होना चाहिए प्रेम

'मानस-हनुमानचालीसा', जो 'रामचरित मानस' की पृष्ठ भूमि में हम और आप उसका संवाद कर रहे हैं, उस 'हनुमान चालीसा' को जो पढ़े उनको सिद्धि मिलेगी यानी मेरे अर्थ में शुद्धि मिलेगी। साक्षी गौरी-शिव। गोस्वामीजी कहते हैं, तुलसीदास सदा हरि का किंकर है, चेरा है, दास है, इसलिए आप मेरे हृदय में डेरा करे, निवास करे।

और मनोरथ जो कोई लावै।
सोई अमित जीवन फल पावै।।

हमारे जीवन के छोटे-बड़े जो मनोरथ होते हैं, भौतिक मनोरथ के अतिरिक्त भी कुछ मनोरथ करेंगे तो गोस्वामीजी कहते हैं, उसको सीमित नहीं, अमित जीवनफल की प्राप्ति होगी, शाश्वत जीवनफल मिलेगा। कल चर्चा हुई, तत्त्वतः जीवनफल है क्या? यहां जीवन के फल को पाने की बड़ी महत्त्व की बात रखी है। जीवन एक वृक्ष है और उसके फल के बारे में शास्त्र, मनीषी लोग, संतगण, आप सब भी अपने विचारों से सोच सकते हैं कि आपके जीवन का फल आपने कौन निर्धारित किया है? ये आप पर आधारित है। यहां गुरुकृपा से कुछ विचार प्रस्तुत करना है तो मैं आपसे बात करूंगा। मैं व्यासपीठ से बड़ी ईमानदारी से दो-टूक बात करता हूं। मैंने अपने जीवन का फल क्या निश्चित किया है? मैं 'हनुमान चालीसा' का पाठ करूं तो मुझे कौन जीवनफल चाहिए? सिद्धियां नहीं। क्या करे सिद्धियों को? बिन मांगे मोती मिले हैं। स्कूल जाता था तो स्लीपर की पट्टी टूट जाती थी तो शूल डालके बड़ी मुश्किल से चलता था! आज नाम प्रभाव गयंद बिठायो। अब मेरे लिए जीवनफल कौन शेष है? मैं ये पेट छूटी बात कर रहा हूं। आप अन्यथा ले तो मेरी जिम्मेवारी नहीं। बोलना मेरी जिम्मेवारी, किस अर्थ में सुनना ये आपकी जिम्मेवारी। एक शे'र सुनाना चाहता हूं -

वो अपनेआप को हर शख्स से काबिल समझता है।
अजीब इन्सान है, नुक्सान को हांसिल समझता है।

सावधान, अपनेआप को कभी सबसे काबिल मत समझना। हर क्षेत्र में हमारी एक सीमा है। उसको कबूल करके दिल की बातें करे। एक ओर शे'र -

सबब दरिया से जब पूछा रोने का तो कह दिया,
नादान नाखूदा मझधार को साहिल समझता है।

मासुम गाज़ियाबादी के शे'र है। अपनेआप को हर शख्स से काबिल मत समझना। निरंतर अपनेआप से स्पर्धा कर के आगे बढ़ो, दूसरों से नहीं। मैं आज हूं, कल दूसरा होना चाहिए, ये मोरारिबापू का ईरादा होना चाहिए। मैं कल होउं, परसों इससे नया होउं। लेकिन आप से काबिल हो जाऊं, ये घाटे का सौदा है। ये सोच नुक्सान है। सावधान। सोचो, आपका जीवनफल आप सोचिये, और मेरे जीवन का फल जाहिर है - सत्य, प्रेम, करुणा। मैं याद करूं भारतवर्ष के मरहूम प्रधानमंत्री हमारे गुजरात के मोरारजीभाई देसाई। ये प्रधानमंत्री हुए तो पत्रकारों ने पहली ही परिषद में पूछा कि अब आप चाहते थे वो मिल गया? उसने बड़ा प्यारा जवाब दिया, 'मेरा लक्ष्य सत्ता नहीं है, सत् है। सेवा के लिए मैं दिल्ली की गादी ग्रहण करूंगा, लेकिन मेरा लक्ष्य सत् है।' हमारा जीवनफल क्या है?

'हनुमान चालीसा' जिसका जो जीवनफल है वो प्रदान करेगी। वादा। सत्य। और शायद हम इन्सान है, सत्य में कमज़ोर पड़े तो! कभी चूक जाय। और करुणा तीसरा फल। इन्सान एक मायावी जीव होने के नाते शायद हम करुणा भी चूक जाय, कठोर हो जाय समाज पर, शेठ पर, नौकर पर, बच्चों पर। सत् न छूटे करुणा मेरे से एक पल भी न छूटे ये मैं चाहता हूं। मेरी आंखें भीगी रहे। ये तीनों मैं ईधर-उधर नहीं करना चाहता और ये कोई नये सूत्र नहीं है। विनोबाजी ने अपने ढंग से कहा है। ये गंगप्रवाह पहले से बह रहा है। ये तीनों जीवनफल के रूप में मैं समझता हूं इसलिए 'हनुमान चालीसा' को आत्मसात् करने की कोशिश है मेरी। लेकिन मानो सत्य में कमजोर रहे, करुणा चूक गई, लेकिन जो केन्द्र में है, जो व्यक्त मध्य है, वो है प्रेम। मैं आपको निमंत्रित करूं, हम सबका जीवनफल होना चाहिए प्रेम। प्रेम सही में आया तो आप असत्य की राह पर कदम रखने से सोचोगे।

साधु का लक्षण है, कठोर वाक्य कदि ना बोले। 'श्रीमद् रामचरित मानस' में भरतजी का जीवनफल है प्रेम। राम को मनुष्य के रूप में एक क्षण के लिए समझ़ लो तो रामरूपी मानव ने जीवनफल क्या निश्चित किया था? 'मानस' क्या कहता है? प्रसिद्ध पंक्ति -

राम हि केवल प्रेमु पिआरा।
जानि लेउ जो जाननिहारा।।

'बिना प्रेम रीझे नहीं तुलसी नंदकिशोर।' थोड़ा सत् में कमजोर पड़ोगे तो कृष्णप्यार करके कहदेंगे, कोई बात नहीं। प्रेम में कमजोर मत होना। जीवनफल है प्यार। जीवनफल है स्नेह, महोब्बत। राधा का जीवनफल क्या? प्रेम। गोपीजनों का जीवनफल क्या? प्रेम। भरत का जीवनफल है प्रेम। 'अयोध्याकांड' के समापन में गोस्वामीजी के हस्ताक्षर -

सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जनमु न भरत को।
मुनि मन अगम जम नियम सम दम बिषम ब्रत आचरत को।

सीताराम प्रति भरत का प्रेम न होता तो धरती पर मुनियों के मन को अगम, निगम, सम, दम, व्रत, आचार कौन बताता? दुःख, दाह, जलन, दूषण एक प्रेम की पृष्ठभूमि में कौन दिखाता? इस कलिकाल में मेरे जैसे सठ को राम के अभिमुख कौन करता यदि भरत प्रेम नहीं होता।

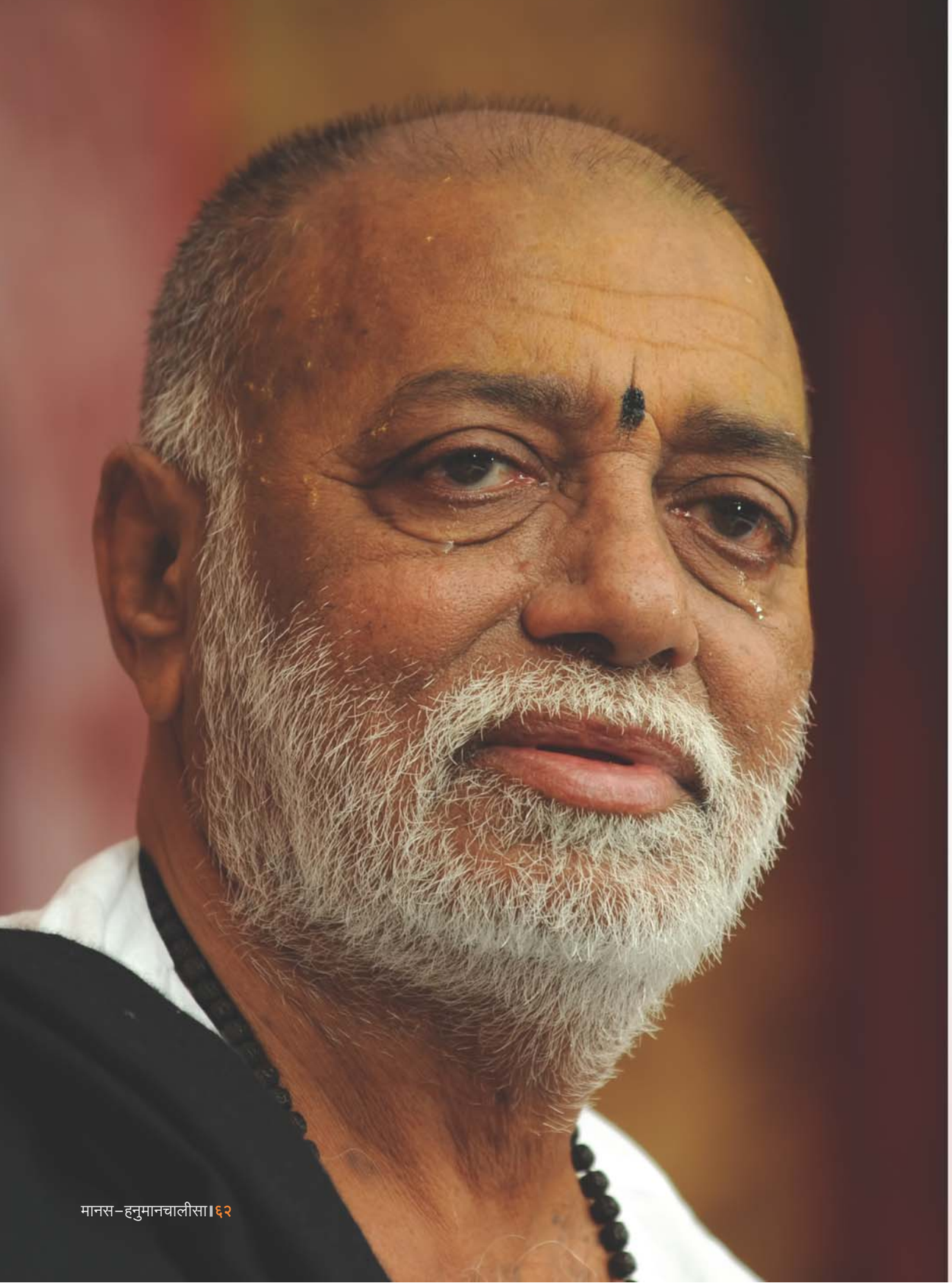

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति।।

तो, जीवनफल प्रेम, जीवनफल सत्य, जीवनफल करुणा। ये तो मेरा मनोरथ है। और प्रेम मध्य में रहे तो दोनों वस्तु साथ-साथ रहेगी। मध्य न छूटे। रामकथा का आरंभ प्रेम से है, मध्य भी प्रेम में और अंत भी प्रेम में है। शास्त्र का सिद्धांत है। मूल सिद्धांत होता है। रामकथा शुरू होती है, तो तुलसी कहते हैं, 'जाहि दीन पर नेह।' जिसको दीन पर, पतितों पर, जो हार चूके हैं, डिप्रेश हुए हैं ऐसे लोगों पर प्रेम। और मध्य में 'सिय राम पद प्रेम।' और आखिर में 'प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।'

एक बार उद्धव श्रीकृष्ण से पूछते हैं कि गोपियों का जीवनफल यदि प्रेम है तो ये क्रिष्न के विरह में जीवित कैसे रह पाई? 'मानस' में भरत इतना प्रेमी है तो राम के विरह में चौदह साल जी कैसे सके? भरत ने कैसे नंदिग्राम में चौदह साल प्राण बचाये? उद्धव कृष्ण से पूछते हैं। कृष्ण भाष्य करते हैं, 'प्रणयेन ही।' प्रणय से। प्रणय की भूमि है वृंदावन। जहां कोई रिश्ता-नाता नहीं, जो है, है, प्रेम, प्रेम। उद्धव क्रिष्न का सखा है। बोले, कैसे प्राण टिके ? तब क्रिष्न कहते हैं, 'मैंने गोपियों को कहा था, प्रत्यागमनं।' मैं आऊंगा। बस, ये बोल पर प्राण टिके थे आउंगा, ये बोल पर भरोसा।

प्रेम के माँ-बाप का नाम विश्वास है। विश्वास है तो प्रेम पैदा होता रहेगा, 'बिनु बिस्वास भक्ति नहीं।' भरत को पादुका देकर कहा, 'चौदह साल के बाद हम आ जायेंगे।' प्रेम की किताबें नहीं होती। सच्चे इन्सान में प्रेम की जो अनुभूतियां होती है इसीसे प्रेम के शास्त्र अंतरंग बुनते हैं। प्रेमशास्त्र प्रेमियों के हृदय में प्रिन्ट होते हैं।

तो, ऐसा प्रेम जीवनफल है, तो उसे पाने का रास्ता थोड़ा भी मिल जाय। अमृत से स्नान नहीं हो सकता, अंजलि में लिया जाता है। थोड़ा मिल जाय उसके कुछ सीधे-सादे उपाय मैं कहूं आप से।

प्रेम पाना है तो जहां-वहां झघड़ा मत करो। क्यों कहता हूं कि झघड़ा करने से जिनसे तुम्हारा द्वेष हो गया, उसी का चिंतन रहेगा, क्रिष्नचिंतन छूट जायेगा। यदि जीवनफल प्रेम बनाना है तो झघड़ा छोड़ो। दुश्मन याद रहेगा। घाटे का सोदा है।

काम-काज करो, ओफिस का काम करो, लेकिन प्रेम पाना है तो व्यर्थ काल मत व्यतीत करो, हरिनाम लेना शुरू कर दो। मधुसूदन सरस्वतीजी ने कहा, 'व्यर्थकालत्वं', यदि जीवनफल प्रेम करना है तो काल व्यर्थ न जाय। मैं आपकी तरह एक संसार में रहनेवाला आदमी हूं। हम सब व्यस्त हैं हमारे सबके अपने-अपने दायित्व है, जिम्मेवारियां है, ये सब निर्वहन करो, लेकिन समय मिलते ही काल व्यर्थ मत गवांओ, 'हे हरि', नाम जपो। तीसरा है, कभी विश्वास भंग न होने देना। पाना नहीं, पहचानना है। हम तुम्हारे हैं, तुम हमें पहचान लो। हे हरि, हम भरोसा रखें।

चौथा, बहुत सावधान रहना। किसी विशेषता का अहंकार न आ जाय, वर्ना रस का स्वाद थोड़ा कम हो जायेगा। हमारी क्षमता का सन्मान हरि करे। 'मानस' में लिखा है, अभिमान शोकदायक है। जितना शोक का लिस्ट है, वो अभिमान की गिफ्ट है। अभिमान ईश्वर का आहार है। तो, आश्रय मत गंवाना।

तो बाप, 'मानस-हनुमानचालीसा' भाग-८ यहां रख रहा हूं। 'अरण्यकांड' के आरंभ में प्रभु स्थळांतर करते हैं। अत्रिऋषि के आश्रम में जाते हैं। महर्षि अत्रि ने प्रभु का सन्मान किया, ठाकुर की स्तुति की। तुलसी ने वन्य संस्कृत में लिखी। राम की स्तुति अत्रि से -

नमामि भक्त वत्सलं । कृ पालुशील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

अनसूया और जानकी का संवाद हुआ। फि र दिव्य वस्त्र अलंकारअनसूयाजी ने जानकी को दिया। कई ऋषिमुनिओं को मिलते-मिलते सुतीक्ष्ण-कुं भज के पास प्रभु पहुंचे। और फि र वहीं से प्रभु आगे बढ़े ।रास्ते में जट ायुसे मैत्री हुई। और प्रभु गोदावरी के तट पर पंचवट ी में निवास करने लगे। एक बार लक्ष्मणजी ने पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे ।प्रभु ने पांच प्रश्नों के उत्तर दिये। जीवन की पंचवट ीमें भी पांच प्रश्न उठ ते हैं। ठ ाकुर उसके जवाब देते हैं। फि र प्रभु ने सोचा कि अब ललित नरलीला करूं ।जानकीजी को कहा कि तुम अग्नि में समा जाओ। अब मुझे मेरी लीला आगे बढ़ ानी है। और ये योजना बनी, इसलिए पहले शूर्पणखा को दंडि त की। शूर्पणखा ने खरदूषण को उक साया।उसको निर्वाण दिया। शूर्पणखा ने रावण को कहा। रावण योजना बनाकर मारीच को लेकर पंचवट ीमें आता है। जानकीजी का अपहरण होता है। माया सीता का अपहरण हुआ।

भगवान प्राकृ तलीला करते हुए रोते हैं जानकी के विरह में। राम को रोना चाहिए। राम न रोते तो आलोचना होती। जिस धर्मपत्नी ने एक पति के कक्ष पर इतना साम्राज्य छोड़ दिया था उसका कोई अपहरण करे तो एक पति के रूप में राम न रोये तो बड़ ी आलोचना होगी। पागल जैसे हो गये! जट ायुशहीदी प्राप्त करते हैं। रावण सीताजी को लेकर अशोक वाटि का में रख देता है। यहां भगवान जानकी की खोज करते-करते जट ायु को सारूप्य मुक्ति देकर आगे बढ़ ते हैं। और प्रभु शबरी के आश्रम में पधारे। शबरी ने प्रभु को कहा, मैं आपकी स्तुति कि न शब्दो में करूं ?नव प्रकार की भक्ति का प्रकाशन कि या और फि र शबरी दिव्यलोक में चली गई।

फि र भगवान पंपासरोवर आये, नारद से भेंट हुई। फि र संतों के लक्षण की चर्चा की और 'अरण्यकांड' को विराम दिया।

भगवान आगे बढ़े ।और हनुमंत कृ पा से सुग्रीव की भेंट हुई। बालि का प्राणभंग हुआ। सुग्रीव को राम मिले। उदासीन व्रत के कारण प्रभु ने प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास कि या।जानकीजी की खोज की योजना बनी। सभी दिशाओं में बंदर-भालू को भेज दिया और अंगद को नायक बनाकर एक खास टु क डी को दक्षिण में भेजने का निर्णय कि या गया। सब राम को प्रणाम करते, सीया की खोज में निकलते हैं। श्रीहनुमानजी सबसे पीछे प्रणाम करते हैं। काम करनेवालों को पीछे रहना चाहिए। काम महत्त्व का है; पीछे रहना, मध्य में रहना कि आगे रहना महत्त्व का नहीं है। समंदर के तट पर संपाति नामक जट ायुके बड़े भाई ने कहा, मेरे पास पांख नहीं है, आंख सलामत है, और मैं यहां बैठे -बैठे जानकीजी को देखता हूं। अशोक वृक्ष के नीचे है। आप में से कोई समंदर को लांघ ले वो रामकार्य करेगा। हनुमानजी चूप है और जामवंत ने आह्वान कि या, 'हे मारुतनंदन, आप चूप क्यों है? राम का काम करने के लिए आपका अवतार है।' सुनते ही हनुमानजी तैयार हुए। 'कि ष्कि न्धाकांड' पूरा हुआ।

'सुन्दरकांड' शुरू हुआ। हनुमानजी समंदर लांघकर लंका में पहुंचते हैं। जानकी कहीं पाई नहीं। विभीषण के घर गये। विभीषण और हनुमान की भेंट हुई। हनुमानजी विभीषण को युक्ति पूछ ते हैं कि जानकी मिले। भक्ति की युक्ति कि सी साधु से पूछ ा जाय। हनुमानजी महाराज अशोक वृक्ष के नीचे बैठ ी जानकी का दर्शन करते हैं। पहचान के लिए माँ को मुद्रिक ा देते हैं।

बाद में श्रीहनुमानजी फ लखाते हैं, तरु तोड़ ते हैं। लंका के रक्षक मारने आये। हनुमानजी ने सबको मारा, पछ ड़ ा।अक्षय आया। आते ही अक्षय का क्षय कि या।ईन्द्रजित आया। ईन्द्रजित ने ब्रह्मास्त्र फें का ले गया लंका के दरबार में। हनुमानजी दरबार देखकर खुश हुए। गुरु अपने शिष्य का सुख देखकर खुश होते हैं। हनुमान शंकर है और रावण शंकर का चेला है। रावण ने पूछ ा,तू कौन है? हनुमानजी ने परिचय दिया, 'रावण, जिनकी आज्ञा पाक रमाया चौद ब्रह्मांड फ रती है, मैं उस परमतत्त्व का दूत हूं। तू मेरी माँ का अपहरण करके लाया है, लौट ा दे। तामसी अभिमान छोड़ दे।' रावण गुस्से में आ गया, मृत्युदंड दे दिया, विभीषण ने कहा, 'नीति मना करती है, दूत को मारा न जाय।' रावण ने कहा, 'तो इस बंदर की पूंछ को जला दो। और बिना पूंछ अपने मालिक के पास जायेगा तो वो भी ड रजायेगा।' पूंछ जलाई। हनुमानजी ने इधर-उधर लंका को जलाई! भक्ति परिपक्व है तो भक्त नहीं जलेगा, मान्यता को जला देगा। पूंछ बुज़ाई। छोट रू पलेक रमाँ के पास आये।

हनुमानजी लौट आये सुग्रीव के पास, सब राम के चरणों में आये और प्रभु ने कहा, हनुमान, अब विलंब न करे। अभियान हुआ। समुंदर के तट पर सब पहुंचे। यहां रावण ने विभीषण को त्याग दिया। विभीषण प्रभु के शरण में आया। प्रभु ने विभीषण से पूछ ा,ये समंदर कैसे पार कि याजाय? बोले, तीन दिन आप समंदर के तट पर व्रत करो,समंदर तुम्हारा कुलगुरु है और वो उपाय बताये तो बल का प्रयोग ना करे। तीन दिन प्रभु बैठे ।समंदर माना नहीं। प्रभु ने तीर उठ ाया,समंदर में ज्वाला प्रकट हुई और समंदर विप्र रूप धारण करके प्रभु के शरण में आया और बोल, मेरी जड़ ताके कारण आपने मुझे दंड दिया, अच्छा कि या! आप सेतु बनाओ। सेतुबंध का निर्णय हुआ। 'सुन्दरकांड' पूरा हुआ।

'लंका कांड के आरंभ में सेतुबंध की रचना हुई, प्रभु ने कहा,ये परम रमणीय धरती है, यहां मेरी इच्छा है शिव की स्थापना करो।महादेव की स्थापना हुई। प्रभु ने विष्णु और शिव का भेद मिट ा दिया। दो विचारधारा का सेतुबंध कि या।रामेश्वर नाम धारण कि या, रामेश्वर की पूजा हुई।

नमामीशमीशान निर्वाणरू पंविभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरू पं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।

प्रभु की सेना अभियान करती लंका में आई। सुबेल के पर्वत पर प्रभु ने मुकाम कि या। उधर रावण मनोरंजन प्राप्त करने के लिए लंका के शिखर पर एक अखाड ा है वहां आया है। मंदोदरी साथ है। प्रभु को लगा, मेरे सन्मान में ये आदमी दावत दे रहे हैं। प्रभु ने तीर निकाला, प्रतिभाव दिया। महारस भंग हुआ, रावण का मुकु ट गिरा। रावण ने कहा, कोई बात नहीं। मंदोदरी रावण को समझाने गई। दूसरे दिन समझाने अंगद गया। मंत्रणा विफ ल।युद्ध अनिवार्य। धमासाण युद्ध हुआ और एक के बाद एक वीरपुरुष निर्वाण को उपलब्ध होते हैं। आखिर में इक त्तीसबाण लिया, दस मस्तक ,बीस भूजा, इक त्तीसवां बाण नाभि पर ड ाला है। प्रभु ने नाभिछेदन कि या और रावण ने जीवन में पहली बार 'राम' का है। रावण को निर्वाण प्राप्त हुआ। विभीषण को राजतिलक हुआ।

प्रभु ने हनुमानजी को कहा, जानकीजी को खबर दो। मूल जानकी प्रकट हुई। ठ ाकुर और जानकी विराजमान है। भगवान विमान से लंका कारणमेदान जानकीजी को दिखा रहे हैं। सेतुबंध का दर्शन हुआ। रामेश्वर भगवान को प्रणाम कि या।कुं भजआदि के

आश्रम में जा कर सुख देते हुए शृंगबेरपुर प्रभु का विमान ऊतरा। हनुमानजी को कहा, भरत को खबर दे, कहींदेर न हो जाय। प्रभु के वटसे मिले। के वटको कहा, उतराई देने आया हूं। तुने कहाथा कि लौट तेसमय लूंगा। बोले, 'महाराज, ये तो वापस बुलाने कीयुक्ति थी। देना ही है तो हमने आपको नौका में बिठायाथा, आप हमें विमान में बिठाकर अवध ले चलो।' सबको लेकर विमान अवधपुर आता है। विमान में बैठे तब बंदर थे, अवध कीभूमि पर ऊतरे तो, 'धरे मनोहर मनुज सरीरा।' रामकथा असुर से मनुष्य बनाने की प्रक्रियाहै। यहां नये लोग ढालेजाते हैं।

गुरु वशिष्ठ जी आये। प्रभु ने प्रणाम किया। भरत और राम मिले। अमित रूप धारण किये।ऐश्वर्य प्रकटकिया, जिसकीजो भावना ऐसे प्रभु उनको मिले। ये राम है। प्रभु पहले माँ कैकेयी के महल गए, 'माँ मत रो। तूने वन नहीं भेजा होता तो भरत जैसा भाई कैसे परख में आता? दुश्मन कैसा होता है, एक नारी का सत्य कैसा होता है, ये वन गया तो पता लगा।' सुमित्रा को मिले। कौशल्या के चरण पकड़े।प्रेम के आंसू गिर पड़े।

वशिष्ठ जी ने सिंहासन मंगवाया। सत्ता सत् के पास जाया करती है। प्रभु ने पृथ्वी को प्रणाम करके ,दिशाओं को प्रणाम करके ,सूर्यदेव को प्रणाम करके , गुरुदेव को प्रणाम करके , आचार्यों को प्रणाम करके ,माताओं को प्रणाम करके ,जनेता को प्रणाम करके प्रभु गादी पर विराजित हुए। जानकीजी वामभाग में विराजित हुई। विश्व को रामराज्य यानी प्रेमराज्य देते हुए वशिष्ठ जीने राम के भाल में तिलक किया, गोस्वामीजी लिखते हैं -

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। दिव्य रामराज्य कीस्थापना हुई। छ मास के बाद सबको विदा दी, एक हनुमान को छोड़ कर।हनुमानजी पुण्यपुंज है, इसलिए निरंतर राम कीसेवा में रहे। अयोध्या के वारिस का नाम दिखाना था। लव-कुश।तुलसी कहतेहैं, राम को दो पुत्र वैसे तीनों भाईयों को भी दो-दो पुत्र हुए। उसके बाद तुलसी ने रामकथा को समाप्त कर दिया। लोक हृदय में राम-सीता बैठे हैं, तुलसी उसको बिलग करना नहीं चाहते थे।

कथा का तत्त्व वहां पूरा होता है। फिर कागभुशुंडिऔर गरुड की कथा।गरुड ने आखिर में सात प्रश्न पूछे और ये सात प्रश्न 'मानस' के सात कांडों का सार है। कथापूरी हुई। कागभुशुंडिके चरणों में प्रणाम करके गरुड विदा लेता है। भशुंडि ने कथा को विराम दिया। यहां याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाजजी को कथा को विराम दिया कि नहीं, स्पष्ट नहीं है। शायद ये प्रयाग में चलती कथा है, इसलिए जब तक त्रिवेणी का प्रवाह चलता रहेगा, ये कथा भी चलती रहेगी। महादेव ने कैलासके शिखर पर पार्वती को कथासुनाई, पार्वती ने कहा,मैं कृतकृत्यहुई। तुलसी अपने मन को कथासमाप्त करतेबोले -

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

तुलसी ने भी अपनी दीनता कीपीठ से विराम दिया। शिव ने ज्ञानपीठ से कथा को विराम दिया। याज्ञवल्क्य ने कर्मपीठ से कथा को विराम दिया। बाबा भुशुंडि ने उपासना कीपीठ से विराम दिया। उन चारों की आशीर्वादक छायामें बैठ कर मैं मोरारिबापू आपके सामने गा रहा था, मैं भी मेरी वाणी को विराम देने कीओर हूं।

इस कथा के जो निमित्त बने, मयूर और दिलीप। कोईहेतु नहीं, केवलनिमित्त, स्वान्तः सुखाय। इन दोनों के परिवारों के लिए व्यासपीठ से मेरा बहुत-बहुत प्यार, बहुत शुभकामना और आशीर्वाद। सभी श्रोता भाई-बहन, यहां कीसमग्र जनता को याद करूं। बोर्डरपर तहनात में लगे मेरे देश के नौजवानों को याद करें।सबके प्रति मेरी शुभकामना व्यक्त करता हूं। फिर मुलाकातहोगी रामनाम के नाते।

इस बुद्धा होल में नवदिवसीय कथा संपन्न हो रही है तब ये नवदिवसीय कथा का सुक्रित जो इकठ्ठा हुआ है वो मैं यहां कीसमग्र जनता को समर्पित करना चाहता हूं और बोर्डरपर तहनात में लगे हुए मेरे देश के नौजवानों को समर्पित करनाचाहता हूं।

> *प्रेम पाना है तो जहां-वहां झघड़ा मत करो। झघड़ा करने से जिनसे तुम्हारा द्वेष हो गया, उसी का चिंतन रहेगा, कृष्नचिंतन छूट जायेगा। कम-काज करो, औकिसका कम करो, लेकिन प्रेम पाना है तो व्यर्थ कालमत व्यतीत करो, हरिनाम लेना शुरू करदो। तीसरा है, कभीविश्वास भंग न होने देना। चौथा, बहुत सावधान रहना। किसीविशेषता का अहंकार न आ जाय, वर्ना रस का स्वाद थोड़ा कम हो जायेगा। 'मानस' में लिखा है, अभिमान शोकदायकहै।*

मानस-मुशायरा

वो अपनेआप को हर शख्स से काबिल समझता है।
अजीब इन्सान है, नुकसान को हांसिल समझता है।
सबब दरिया से जब पूछा रोने का तो कह दिया,
नादान नाखुदा मझधार को साहिल समझता है।

– मासुम गाज़ियाबादी

मुझको कबूल कर मेरी कमजोरियों के साथ।
या मुझको छोड़ दे मेरी तन्हाईयों के साथ।

– दीक्षित दनकौरी

दिल और अक्ल अपनी अपनी कहे खुमार,
बुद्धि की सुन लो, दिल का कहा मानो।

– खुमार बाराबंकवी

कोई सुरत नहीं बचती पुरानीवाली,
उनकी महफिल में नये लोग ढाले जाते हैं।

– राज कौशिक

मुहोब्बत कानोंमें रस घोलते हैं।
ये उर्दू जुबां है जो हम बोलते हैं।
हजार आफतों से बचे रहते हैं वो,
जो सुनते जियादा हैं, कम बोलते हैं।

– शरफ़ नानपारवी

कवचिदन्यतोऽपि

‘रामचरित मानस’ के सात सोपान में वेद के सप्त रत्न है

तुलसी अवॉर्ड समारोह में मोरारिबापू का प्रेरक उद्बोधन

कलिपावनावतार पूज्यपाद गोस्वामीजी की जन्मजयंती के इस पावन अवसर पर हमारी वंदना कुबूल करने के लिए बड़ी उदारता से, ‘मानस’ की इस अर्धाली को चरितार्थ करते हुए ‘बड़े सनेहु लघुन्ह पर करहिं’ यहां कितनी व्यस्तता के बाद, कितनी असुविधा के बाद यहां जो आप पधारे हैं। हमारे परमपूज्य महामंडलेश्वरजी महाराज, परमपूज्य मलूकपीठाधीश्वर महाराज, उपाध्यायजी दादा, अवध से पधारे संत प्रभु और बड़ी खुशी है कि आप दूसरी बार पधारे हैं। जब दिवंगतों की वंदना की गई तब साकेतवासी पंडित रामकिंकरजी महाराज के प्रतिनिधि के रूप में आप पधारे थे। आदरणीया बहनजी मंदाकिनीजी भी पधारी थी। सभी अन्य पूजनीय गण। सभी भाई-बहन। समय काफी गुज़रा है। और प्रसन्नता व्यक्त करनी है। कैसे व्यक्त करूं? भगवान जगद्गुरु शंकराचार्य का एक वचन है, ‘प्रसन्न चित्ते परमात्मदर्शनम्।’ व्यक्ति का चित्त प्रसन्न होता है

तो परमात्मा के दर्शन होते हैं। बड़ा सरल उपाय जगद्गुरु भगवान ने दिया। आप सबके दर्शन हुए। वचनामृत सुनने को मिला। आप सबने हमारा प्रणाम कुबूल किया। बस, मेरी प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं है।

मैं क्या कहूं? कभी-कभी सोचता हूं कि इतनी सरलता से आप आये हैं, कैसे ऋण अदा करें? लेकिन आप बड़े उदार है। और कुछ नहीं कहना है। हमने हमारी जीभ तो 'रामचरित मानस' को दे दी है, कुछ चीज़ पेट में की जा सकती है न! गाने लगूं तो खबर नहीं के दारातक पहूंच जाये! आधी रात! इसीलिए और कुछ न कहते हुए आखिर में मैं इतना ही कहूं कि सभी संतों ने बड़ी प्रसन्नता से हमको आशीर्वाद दिया। अपने विचार भी प्रस्तुत किये। 'मानस' के बारे में, गोस्वामीजी के बारे में, लेकिन मलूक पीठाधीश पूज्यपाद ने एक वेदवचन से शुरूआत की। और फिर कहते-कहते आप तुलसी और 'रामचरित मानस' तक हमें ले आये। ये सत्य है। सोचने लगा, कभी बोला भी हूं। वेद का एक ओर अमृत वचन है, 'दमे दमे सप्त रत्नाः।'

'दम' का अर्थ दमन भी होता है, 'दम' का अर्थ एक व्याधि भी है। और संस्कृत के विद्वानों ने, वेद के भाष्यकारों ने 'दम' का अर्थ घर भी किया है। दम मानी घर, गृह। तो वेद प्रभु ने तो कह दिया कि घर-घर सात रत्न हो। हम सब जानते हैं, वेद तो हम समझ नहीं पाते हैं। सबके बस की बात नहीं है। तो फिर, वेद से 'वाल्मीकि रामायण', वाल्मीकि से फिर 'मानस'। 'मानस' तक आते-आते मुझे लगा कि 'दमे दमे सप्त रत्नाः।' घर-घर सात रत्न हो।

ये सात रत्न हम सबके घर-घर के रत्न है। क्योंकि आज हम अनुभव कर सकते हैं, कर रहे हैं। हमारे जो भगवान शंकर से कथायें शुरू हुई उसके बाद आज तक अनगनित महापुरुषों ने अपनी बानी पवित्र की 'मानस' गा-गा कर। इन सभी महापुरुषों ने घर-घर 'रामचरित मानस' पहुंचाया है। मैं तो कभी-कभी कहता हूं, इन संतों ने घर-घर क्या, घट-घट 'रामचरित मानस' पहुंचाया है, देश-काल के अनुसार। मैं आज सुबह ही कह रहा था, दो-चार भाई बैठे थे तब। सूरज तो युगों से है, लेकिन सूरज का सदुपयोग करके, संशोधन करके आज इससे बहुत ओर लाभ प्राप्त करने चाहिए। लोग कर रहे हैं उसकी ऊर्जा से। वैसे 'रामचरित मानस' तो मूल सत्य है। परमसत्य है। आज के देश-काल के अनुसार उसके नये-नये अर्थ खुलने चाहिए, मूल को पकड़ कर। उसका सदुपयोग होना चाहिए। और ये सब महापुरुषों अपने ढंग से चाहे ये व्यास पद्धति से कथा कही गई हो, चाहे वो चित्रकूटी पद्धति हो, बनारसी पद्धति हो, भोजपुरी पद्धति हो कि हमारी काठियावाडी पद्धति हो। कोई भी पद्धति हो। लेकिन 'रामचरित मानस' वेद के सारें सात रत्न हमारे घर में ला देता है। 'दमे दमे सात रत्नाः।'

पहला रत्न है, वेद चाहता है कि घर-घर में एक आंगन हो। घर हो, लेकिन फ्लेट नहीं, आंगनवाला घर हो। और 'बालकांड' आंगनवाला घर है। प्रत्येक के घर आंगन। और महाराज के घर तो आंगन है ही, जहां चारों खुल्ले पैर नाचते रहते हैं, अपना प्रतिबिंब देखते रहते हैं। आंगनवाला घर रत्न है। और दशरथ का आंगन! 'द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।' तो हम गाते ही रहते हैं। और प्रत्येक घर ऐसा है। 'नृपगृह सरिस सदन सब केरें।' सब घर ऐसे हैं। चाहे मिथिला लो। और लंका क्यों छोड़ दे? वहां भी अच्छे-अच्छे घर बांटे हैं इस आदमी ने! तो, स्वतंत्र घर सबको दिया है। आंगनवाला घर, जिसमें बालक खेलना चाहिए। फ्लेट में तो बाल्कनी रही! बालक को खेलने की तो जगह नहीं। आंगन के फिर कई अर्थ कर सकते हैं आज के संदर्भ में। पहला रत्न, वेदों की जो इच्छा थी 'रामचरित मानस' ने पूरी की।

दूसरा रत्न वेद का है, प्रत्येक व्यक्ति को सुंदर वस्त्र मिलने चाहिए। वस्त्र मानी कपड़ें के रूप में भी लो और लज्जा के रूप में भी। वस्त्र मानी लोकमर्यादा। 'अयोध्याकांड' ने पूरा किया, लोकमर्यादा, लोक लज्जा। और 'उत्तरकांड' में तो स्पष्टता होती ही है कि अच्छे वस्त्र अयोध्या में बनते थे, बनाते थे। 'बसन भरत निज हाथ बनाए।' शायद रेंटिया कांतने का गांधीबापू को वहां से विचार मिला हो, 'रामचरित मानस' से। अपने हाथ से, भरतजी के हाथ से बनाया हुआ वस्त्र दिया जाता है, जो हम जानते हैं। अच्छे वस्त्र, अच्छी मर्यादा, अच्छी वृत्ति, ये रत्न 'अयोध्याकांड' का। तो, 'अयोध्याकांड' अच्छे वस्त्रों की वेद-बात को चरितार्थ करता है। एक लज्जा, एक मर्यादा, एक त्यागवृत्ति। और -

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा।

वस्त्र तो हमारे उस काल में वल्कल ही माने जाते थे। श्रेष्ठ वस्त्र, सात्विक वस्त्र, ऐसे वस्त्र देखते ही लोगों को साधुता की महक आये, एक खुश्बू आये। ऐसे वस्त्र।

वेद ने तीसरे रत्न की चर्चा की है, अच्छा आरोग्य सबको मिलना चाहिए, ये रत्न है। प्रत्येक घर में अच्छा आरोग्य हो। साहब, आरोग्य संयम और तपस्या से आता है। आदमी की जितनी तपस्या भी संयमित हो, अधिक ओवर हो तो तपस्या भी कृश बना देती है, इतना ही नहीं, चीड़-चीड़ भी बना देती है। कई लोगों की मैंने तपस्या देखी है! भगवान बचाये! मुस्कुराते ही नहीं! और राम ने 'मानस' से मुस्कुराना बताया। हमारे 'रामचरित मानस' का एक वक्ता, परम विवेकी वक्ता वक्तव्य शुरू करते हैं तो -

जागबलिक बोले मुसुकाई।

वाक्य निकलता था इससे पहले, कथा शुरू होती थी इससे पहले तो दंतकथा आ जाती थी, चेहरा मुस्कुराता था। और राम तो मुस्कुराकर ही बोलते थे। बिना मुस्कुराये ठाकुर कभी बोले ही नहीं। आरोग्य संयम से आता है, संयमित तपस्या से आता है। देश-काल बदला है। साधु-संतों की देश को बहुत जरूरत है। और साधु-संत इतनी असंयमी तपस्या करके हमें लाभों से वंचित न रखे। उनकी संयमित तपस्या, उनका आरोग्य लोगों को स्वास्थ्य देता है। वो मुनिओं का कांड है पूरा 'अरण्यकांड'। आरोग्य का कांड है। मुनि जैसा तंदुरस्त ओर कौन? साधु जैसा तंदुरस्त कौन? साधु की चर्चा जब छेड़ी गई 'अरण्यकांड' में तब ठाकुर स्वतः चूप हो गए।

कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपाल अपने भगत गुन निज मुख कहे।।

तो, 'अरण्यकांड' वेद के रत्न की अभिलाषा को पूरा करता हैं। अच्छा स्वास्थ्य मिले।

चौथा रत्न अच्छी शिक्षा मिले। और अच्छी शिक्षा 'किष्किन्धाकांड' पूरी करता है। अच्छी शिक्षा प्रदान करनेवाला कांड छोटा है। शिक्षा हो छोटी लेकिन दे-दे बड़ी दीक्षा। तीस दोहे का कांड; 'किष्किन्धाकांड' बिलकुल छोटा कांड है और उसमें सुग्रीव को शिक्षा प्रदान करना और पीछे रहकर काम करना ये शिक्षा बंदरों के माध्यम से हम सब को देना कि पीछे रहकर महत्त्व के काम हो सकते हैं। बिलकुल निर्णय हो गया है कि जानकी अशोक वाटिका में है, संपाति ने ओलरेडी कह दिया, उसी समय भी जगतभर को अपने जीवन से शिक्षा देकर दीक्षित करनेवाला ये हनुमान चूप बैठा था, मौन रहा था। और दक्षिणामूर्ति में तो गुरु का मौन रहना ही बहुत महत्त्वपूर्ण माना है। हनुमान मौन है। एक युवान है, जामवंत और अन्य तो बूढ़े हैं; और मेरा हनुमान तो सदा युवान है। ये युवान चूप बैठा है। मतलब शिक्षा की अभीप्सा जो वेद की थी वो 'रामचरित मानस' के 'किष्किन्धाकांड' ने पूरी की। और साहब, ऋतुवर्णन देखिए। वर्षा और शरद का ऋतुवर्णन। कितनी शिक्षा?

आधी पंक्ति में ऋतुवर्णन, आधी में ऋतवर्णन। क्या जोड़ते हैं गोस्वामी? ऋतुवर्णन, निरंतर वर्षाऋतु का वर्णन चलता है, और दूसरी ओर उपनिषद के ऋत का वर्णन चला आ रहा है। ऋत और ऋतु का जो सेतु बना रहे हैं गोस्वामीजी एक-एक पंक्ति में! ये बड़ी शिक्षा दे रहे हैं। तो, वेद का मनोरथ शिक्षा का रत्न हर घर में होना चाहिए ये हमारे 'रामचरित मानस' ने पूरा कर दिया। वेद का मनोरथ 'रामचरित मानस' पूरा कर रहा है।

पांचवीं वस्तु, अच्छा भोजन सबको मिलना चाहिए। पांचवां रत्न है आरोग्यप्रद भोजन। अच्छा भोजन सबको मिलना चाहिए। 'तात मधुर फल खाहु।' वो बात। और आरोग्यप्रद भोजन माँ ही दे सकती है। जहां मांसाहारी का ज़मेला था, जहां फल-फूल लचकते इतने वृक्ष थे लेकिन कोई फलाहारी तो था नहीं, सब मांसाहारी थे, वहां श्री हनुमानजी महाराज ने मधुर फल खाये। भोजन अच्छा मिले। और समझ लीजिए साहब, जहां भोजन अच्छा नहीं, उसका भजन भी तामसी हो जाता है। भजन को सात्त्विक रखने के लिए भोजन सात्त्विक हो। आहारशुद्ध बिना सत्त्वशुद्धि होती ही नहीं। ये नियम है। तो, अच्छा भोजन। फिर मधुवन के फल खायें, अशोक वाटिका के फल हनुमानजी ने खायें। अथवा तो भोजन मानी चावल, दाल रोटी ही नहीं। वेद इतने संकीर्णहेतु के लिए नहीं बोले।

हमारे निम्बार्की परम्परा में तो जो धामक्षेत्र पूछा जाता है, ज्यादातर धामक्षेत्र विरक्तों को पूछा जाय, गृहस्थीओं को तो क्या, लेकिन उसकी परंपरा में आते हैं, गांव के मंदिरों में पूजा करते हैं, राममंदिरों, क्रिष्नमंदिरों, जो वैष्णव साधु कहलाते हैं, तो हमें भी जब निम्बार्की परंपरा में जो धामक्षेत्र पूछते हैं तो आचार्य पूछते हैं, आपका आहार क्या? तो ये तो नहीं हम कहसकते। बाकी, बाजरी की रोटी हम को बहुत प्रिय है। हम रोज बाबाजी, बाजरी की रोटी ही खाते हैं, डेइली। और वो ही बाजरी की रोटी रात को रख दी जाय, सुबह ठंडी रोटी और दहीं खाये। ये रोज हमारा क्रम है। लेकिन हम ये नहीं कहसकते आचार्यों को कि हम बाजरी की रोटी, गाय का दूध खाते हें। जब पूछा जाय आहार, तो हरिनाम आहार, यही तो जवाब देना पड़ता है। गोवर्धन परिक्रमा, मथुरा धर्मशाला, गोपाल गायत्री, देवी रुकमणि, अच्यूत गोत्र, ये सब जो हमें सिखाते थे मेरे दादाजी, पिताजी भी। कोई पूछेगा नहीं कलयुग में, लेकिन कोई पूछे तो इतना याद रखना कि अपना गोत्र क्या है, ये सब बताना। और हमारे सौराष्ट्र में गंगासती नामक एक ग्रामीण महिला हुई है, उसने बावन भजन लिखे हैं। अद्‌भुत लिखे हैं, अद्‌भुत! वेदान्त, प्रेमलक्षणा, सांख्य, योगदर्शन सब उन्हें अंदर ढलाहै साहब! उसने एक पंक्ति लिखी है, 'जेने सदाये भजननो आहार।' जिनको सदा भजन का आहार है। हरिनाम का आहार, हरिनाम का भोजन। तो, 'सुन्दरकांड' अच्छे भोजन की वेद की कामना पूरी करता है।

फिर वेद का छठ्ठा रत्न है अच्छे साधन, सब के पास अच्छे साधन हो। भजनानंदी पुरुष हो तो उसके पास भी कोई अच्छे साधन हो कि जिस सरल साधन से वो प्राप्त हो। बाकी, गोस्वामीजी तो कहदेते हैं 'विनय' में तो, 'यह कलिकालसकलसाधनतरु...।' उसका फल केवल श्रम है, थकावट है। 'नाहिंन आवत आन भरोसो...।' हरि के नाम के सिवा कोईभरोसा नहीं। तो, अच्छे साधन हो। 'लंकाकांड' वो कामना पूरी करदेगा वेद की। सबके पास अपने अच्छे साधन है। चलो, शस्त्र के रूप में। शस्त्र तो काट नेवालेहैं! लेकिन बंदरों के पास, भालुओं के पास क्या शस्त्ररूपी साधन थे? पर नख, दांत, वृक्ष, पथ्थर ये सब उसके आयुध है। प्राकृतिकआयुध है। शारीरिक क्षमता ही उसका साधन

था। और उसने दुरित को हराया, दुरित को नष्ट किया, शुभ का स्थापन किया। रामराज्य का स्थापन, रावण का नाश मानी अशुभ समापन, शुभ स्थापन। अच्छे साधन थे। साधनवाला मनोरथ मेरे गोस्वामी 'लंकाकांड' में पूरा करदेते हैं।

सातवां रत्न है, अच्छा मनोरंजन मिलना चाहिए। वेद ने कितनी चिंता की होगी एक आखिरी व्यक्ति तक कि वेद का ये सातवां रत्न सबके घर में अच्छा मनोरंजन होना चाहिए। तुलसी ने वेद के मनोरथ को पूरा किया, 'बुध बिश्राम सकल जन रंजनि।' ऐसा कहकर और -

भव भंजन गंजन संदेहा।

जन रंजन सज्जन प्रिय एहा।।

ऐसा कहकर 'रामचरित मानस' का यह मनोरंजन के वल हल्का-फूल्का मनोरंजन नहीं हैं। ये मनोरंजन आत्मरंजन से भी बढ़ है। जो उसमें डूबजाता है, बाहर नहीं निकल पाता।

तो, 'दमे दमे सप्त रत्नाः' की जो बात है, वेद की अभिलाषा 'रामचरित मानस' पूरी करता है। इस वैश्विक ग्रंथ, मैं तो उसको निखिल ब्रह्मांडीयग्रंथ मानता हूं। दूसरे ब्रह्मांड और दूसरे ग्रहों की खोज होगी, हम हो न हो, सो, दो सों, पांच सों साल के बाद, तो वहां भी बाबा कोईनिक लेगा, 'मानस' का पाठ करताहोगा। ये शास्त्र ही वैश्विक क्या, अखिल ब्रह्मांडी शास्त्र है। भगवान राम के रोमरोम में ब्रह्मांड है, तो साहब, तुलसी के शब्द-शब्द में ब्रह्मांड लट करहा है। उसकी हर बोली में ब्रह्मांड लट करहा है। एक शास्त्र के रूप में हम उसके गायक है इसीलिए अर्थवाद नहीं कररहा हूं, अतिशयोक्ति में नहीं जा रहा हूं, थोड़ी अनुभूति भी कह रहा हूं। 'रामायण' क्या नहीं है? ये घर-घर में नहीं, आज घट-घट में पहुंचा है।

तो बाप, ये सात रत्न के वेद के मनोरथ पूरा करने के लिए 'रामचरित मानस' के सात सोपान आये हैं। ऐसे सातों सोपान के समर्थ गायक, समर्थ वक्ता अपने-अपने क्षेत्र के, उसकी वंदना करनेका एक मनोरथ हुआ था। हमारे पूज्य त्रिपाठीजी साक्षी है। कथाकारोंका सम्मेलन हुआ था। एक हमारे कथाकार बंधु ने ही सुझाव दिया था कि ऐसा किया जाय। और हमने कहा कि जरूर हनुमानजी ने चाहा तो हम क्यों ये तलगाजरडा में ही न करें? फिर ये सिलसिला चला। बड़ी खुशी है, बड़ी प्रसन्नता है, आप सब पधारें। आपको क्या देना? मैं तो संकोच महसूस करता हूं। मैं आपको क्या दूं, साहब? आपके चरणों में हम क्या पेश करे? लेकिन ये सब बहाने हैं दर्शन के, श्रवण के, अरस-परस मिलन के। आप भी व्यस्त है, मैं भी व्यस्त रहता हूं। कौनकलकहां, कौनकलकहां? कहां मिलेंगे? ये सब बहाने हैं। इसलिए दीक्षित दनकौरी का एक उर्दू शे'र याद आता है। वो कहकर मैं विराम लूं। उसने कहा-

शायरी तो सिर्फ बहाना है,

असली मक्सद तुझे रिझाना है।

ये (हनुमानजी) राजी रहे। क्योंकि उन्हें 'रामायण' के समान ओर क्या प्रिय है? हनुमानजी जैसा तो विश्व में कोई श्रोता नहीं। यद्यपि वक्ता भी राम को स्तंभित कर गया 'वाल्मीकि रामायण' में, जब हनुमानजी बोलने लगे! तो, उसके समान कौन? और वो रिझे तो क्या कहना? आप सब आये, मैं हृदय से मेरी बहुत प्रसन्नता और प्रणाम पेश करता हूं और इतना ही कहकर पूरा करूं, तलगाजरडा कोईपुर नहीं है, लेकिन, 'सदा रहहु पुर आवत जाता।'

तुलसी अवॉर्ड-२०१३ अर्पण समारोह में कैलास गुरुकुल, महुवा में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक १३-८-२०१३